जैनदर्शन में पञ्च-अणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता

सतेन्द्रकुमार जैन

एम. ए., एम. फिल.ए., जे. आर. एफ.

प्रकाशक

धर्मोदय साहित्य प्रकाशन

सागर (म. प्र.)

- **कृति** : जैनदर्शन में पञ्च-अणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता
- **प्रस्तुति** : सतेन्द्रकुमार जैन
- **सम्पादन** : श्रीमती डॉ. दर्शना जैन
- **संस्करण** : प्रथम, जून 2011
- **ISBN** : 978-81-910547-5-0
- **आवृत्ति** : 1100 प्रतियाँ
- **मूल्य** : 30/-
- **प्राप्ति स्थान** : धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
  बाहुबली कॉलोनी, सागर (म. प्र.)
  मो. 094249-51771
  dharmodayat@gmail.com
- **मुद्रक** : विकास आफसेट, भोपाल

अनुक्रम

1.	प्रस्तावना	संजयकुमार जैन, सिविल जज	4
2.	सम्पादकीय	डॉ. श्रीमती दर्शना जैन	6
3.	प्राक्कथन	लेखक	9
4.	भूमिका		13
5.	व्रत का स्वरूप		17
6.	अहिंसाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता		21
7.	सत्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता		35
8.	अचौर्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता		41
9.	ब्रह्मचर्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता		49
10.	परिग्रह परिमाणाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता		60
11.	परिशिष्ट		64
12.	उपसंहार		99
13.	संदर्भ ग्रंथ सूची		100

प्रस्तावना

पुराकाल से ही जैनधर्म की प्रसिद्धि का प्रचार–प्रसार हो रहा है। जो विभिन्न शिलालेखों एवं साहित्य ज्ञान से ज्ञात होता है। इस प्रसिद्धि में मुख्य कारण मुनिराजों की निष्पृहवृत्ति एवं शास्त्र लेखन रहा है। मुनिराजों ने और जैन विद्वानों ने विभिन्न विषयों पर अपनी लेखनी का उपयोग करके जैन जगत् को उपकृत किया है। जिसमें आचार्य सोमदेवसूरि ने नीतिवाक्यामृतम् ग्रन्थ में नीति विषयक चिन्तन को प्रस्तुत कर जैनों के नीति विषय की धारणा को अवगत कराया। आचार्य उग्रादित्य ने कल्याणकारक ग्रन्थ में आयुर्वेद विषयक चिन्तन प्रस्तुत किया। आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने भद्रबाहु संहिता में, आचार्य अमितगति ने वर्धमान नीति में, आचार्य इन्द्रनन्दि ने इन्द्रनन्दि जिनसंहिता में, भट्टारक सोमसेन ने त्रिवर्णाचार में, आचार्य जिनसेन ने आदिपुराण में जैन कानून के आधार ग्रन्थ प्रस्तुत किए।

पूर्व अध्ययन से ज्ञात हुआ कि जैन लॉ नामक एक पुस्तक सन् 1969 में बैरिस्टर चम्पतराय जी ने अंग्रेजी में लिखी थी। जिसका हिन्दी प्रकाशन भी हुआ। तत्पश्चात् सन् 1984 में आर्यिका ज्ञानमती माताजी के सान्निध्य में श्री दिगम्बर जैन महासभा के द्वारा हिन्दी अनुवाद सहित पुनः प्रकाशन किया गया। इसमें बैरिस्टर चम्पतरायजी ने अंग्रेजों के समय से जैन लॉ से अनभिज्ञ लोगों को जैन लॉ समझाने का प्रयास किया है तथा जैन बंधुओं से अपील की है कि जैन लॉ को हिन्दू लॉ न समझा जाए। जैन परम्परा के आधार पर जैन लॉ को प्रतिष्ठित किया जाए। इसे अदालत में सुचारु रूप से प्रचलित किया जाए। बैरिस्टर चम्पतरायजी ने इस पुस्तक को तीन भागों तथा दस परिच्छेदों में विभक्त किया है। जिसमें दत्तक विधि और पुत्रविभाग, विवाह, सम्पत्ति, दायभाग, स्त्रीधन, भरणपोषण, संरक्षण, रिवाज आदि का वर्णन किया है तथा अंत में आधारित जैन ग्रन्थों का परिचय दिया है। इस प्रकार बैरिस्टर चम्पतरायजी का प्रथम प्रयास सराहनीय था। परन्तु जैन समाज की इस विषय में विशेष उत्कण्ठा न होने से यह जैन लॉ रूप सफल प्रयास अदालत तक नहीं पहुँच पाया।

जैनदर्शन में पञ्च अणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता नामक पुस्तक के माध्यम से जैन लॉ को पुनः उद्घाटित करने का लेखक का यह द्वितीय प्रयास कहा जा सकता है। परन्तु यह प्रयास पूर्व प्रयास से भिन्न प्रयास है। इसमें लेखक ने जैनदर्शन के आधार स्तम्भ पञ्च अणुव्रतों की भारतीय दण्ड संहिता से तुलना की है तथा पञ्च अणुव्रतों की भावनाओं एवं अतिचारों को भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं से जोड़ने का प्रयास किया है।

जैनदर्शन में इन पञ्च अणुव्रत रूप सिद्धान्तों का प्रतिपादन सूक्ष्मता से किया गया है, उतनी सूक्ष्मता से भारतीय दण्ड संहिता इन सिद्धान्तों का बखान नहीं करती। इस पुस्तक में पञ्च अणुव्रतों की भावनाओं एवं अतिचारों में से कुछ अतिचारों में एवं भावनाओं का भारतीय दण्ड संहिता पर किञ्चित् भी प्रभाव नहीं पड़ा। जैसे अहिंसाणुव्रत, सत्याणुव्रत, अचौर्याणुव्रत एवं परिग्रह परिमाणाणुव्रत की पाँचों भावनाओं तथा ब्रह्मचर्याणुव्रत की अंतिम तीन भावनाओं पर भारतीय दण्ड संहिता पूर्णतः मौन है। ब्रह्मचर्य की स्त्रीरागकथा श्रवण एवं स्त्रीतन्मनोहरांग भावनाओं पर गलत दृष्टि होने पर भारतीय दण्ड संहिता दण्ड का प्रावधान करती है। इसके साथ ही जैनदर्शन के पञ्च अणुव्रतों के अतिचारों के विषय में परिग्रह परिमाणाणुव्रत के अतिचारों के अतिरिक्त सभी अतिचारों में भारतीय दण्ड संहिता पूर्ण सहमत है। भारतीय दण्ड संहिता पर यदि जैनदर्शन का प्रभाव परिगणित किया जाए तो ज्ञात होता है कि भारतीय दण्ड संहिता की 511 धाराओं में से लगभग 470 धाराएँ जैनदर्शन के सूक्ष्म एवं स्थूल सिद्धान्तों का अनुशरण करती हैं। मुख्यतः इसी विषय की पुष्टि के लिए लेखक ने प्रयास किया। जिससे जैनदर्शन की कानून विषय में महत्ता प्रदर्शित होती है तथा समाज भी इस पुस्तक का आश्रय लेकर पापों से बचने का प्रयास कर सकती है।

संजयकुमार जैन
सिविल जज, वर्ग प्रथम
खरगौन (म.प्र.)

सम्पादकीय

प्रस्तुत कृति का नाम **जैनदर्शन में पञ्च-अणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता** है। यद्यपि इसका वर्ण्य विषय नाम से ही अवगत होता है कि इसमें जैनदर्शन के सिद्धान्तों की तुलना भारतीय दण्ड संहिता से की गई है। इसमें व्रत का स्वरूप, भेद, उसकी आवश्यकता, व्रतों के विषय में लोगों की भ्रांतियाँ आदि का सुन्दर प्रस्तुतिकरण किया गया है।

जैनधर्म निवृत्ति परक एवं सूक्ष्म तथा स्थूल सिद्धान्तों पर आधारित है। इसमें कर्मबंध का आंकलन एवं उसका फल भावों पर आधारित है। जिसमें भावों को समझना केवली की समर्थ पर निर्भर है, अतः कर्मबंध एवं फल के विषय में कम-ज्यादा का प्रमाण नहीं है। उसका कथन भी निश्चित रूप से नहीं किया जा सकता। जैसे तत्त्वार्थसूत्र में बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह को नरक गति का, मायाचारी को तिर्यञ्चगति का तथा व्रतों से सहित जीवनयापन एवं स्वभाव से सरलता को देवगति एवं मनुष्य गति के बंध का कारण माना है परन्तु कितना आरम्भ एवं परिग्रह रखने से कौन से नरक के किस भाग में उत्पन्न होगा या कितने प्रतिशत मायाचारी करने से किस योनि का तिर्यञ्च बनना होगा। किस प्रकार के स्वभाव की सरलता से अथवा कितने प्रतिशत स्वभाव की सरलता से मनुष्य एवं देवगति का बंध होता है। ये विषय केवलीगम्य हैं। इनका निरूपण केवली जीवों के भावों के आधार पर करते हैं। यह विषय शास्त्रगम्य नहीं है। जैनदर्शन में श्रावकों के लिए प्रायश्चित स्वरूप निश्चित दण्ड का विधान नहीं है अपितु प्रायश्चित देने वाले एवं प्रायश्चित लेने वाले की परिस्थिति पर निर्भर है। परन्तु भारतीय दण्ड संहिता प्रवृत्ति परक एवं स्थूल सिद्धान्तों पर आधारित है। इसमें किए गए कर्म के आधार पर जीवों को धारानुसार दण्ड दिया जाता है।

जैनदर्शन में शुभकर्म करने से पुण्य एवं अशुभ कर्म करने से दण्ड या पाप मिलता है। परन्तु भारतीय दण्ड संहिता में केवल पाप के लिए दण्ड निर्धारित है, क्योंकि भारतीय दण्ड संहिता का निर्माण केवल पाप का उन्मूलन करने के लिए हुआ है। भारतीय दण्ड संहिता की लगभग 80 प्रतिशत धाराएँ जैनदर्शन के सिद्धान्त पर आधारित हैं। लेखक ने तत्त्वार्थसूत्र के **तीव्रमंदज्ञाता- ज्ञातभावाधिकरण वीर्यविशेषभ्यस्तद्विशेषः** सूत्र को भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं के आधार पर टेबल बनाने का प्रशंसनीय प्रयास किया है।

लेखक की इस पुस्तक से ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक ने भारतीय दण्ड संहिता का अध्ययन परिश्रम तथा लगन से किया है। जिससे श्रमसाध्य यह कार्य संभव हो सका। इस पुस्तक के यह विचार यदि व्यक्ति के जनमानस में स्थापित हो जाते हैं तो वह जैनदर्शन के इन पञ्च-अणुव्रत रूप सिद्धान्तों के पालन से अनायास ही भारतीय दण्ड संहिता की वर्णित धाराओं का पालन कर लेगा। लेखक ने इस पुस्तक में भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं को एवं जैनदर्शन के पञ्च अणुव्रतों को ही मुख्यता दी है। परन्तु जैनदर्शन के कुछ सिद्धान्तों में भारतीय दण्ड संहिता से अतिरिक्त अधिनियम लगने पर उसका संकेत मात्र किया है। जिसे पाठकगण अपनी बुद्धि अनुसार दण्ड स्वरूप समझकर कानून के अधिवेत्ता से परामर्श करें। जैसे परविवाहकरण में बालविवाह अधिनियम, कुशील में अनैतिक देह व्यापार अधिनियम, हिन्दू विवाह अधिनियम आदि कुछ अन्य अधिनियमों का संकेत रूप से नामोल्लेख किया है।

समाज में दो तरह के अपराधी होते हैं। एक अपराधी वे जिन्हें अपराध में संलिप्तता प्राप्त है अर्थात् वे अपराध को आदत मानकर करते हैं। जिनकी संख्या नगण्य है। दूसरे वे अपराधी हैं, जिन्हें अपराध करने से भय लगता है परन्तु लालच वश, परिस्थिति वश या कानून की जानकारी के अभाव में वे अपराध कर लेते हैं। जिन्हें बाद में पश्चाताप

भी होता है। वे अपराधी आदतन या स्वभाविक अपराधी नहीं होते। जिसकी संख्या 95 से 99 प्रतिशत है। अपराध को कम करने के लिए अपराध की सजा मिलना आवश्यक है। परन्तु अपराध होने से पहले अपराध को रोकने का एक उपाय और भी है। जिसका नाम अपराध के अथवा कानून के विषय में प्रत्येक नागरिक को शिक्षा प्रदान करना है। समाज में उपस्थित पाठकगण एवं सत्ताधीन शासक वर्ग को परामर्श रूप निवेदन है कि यदि कानून की शिक्षा कक्षा 6 से उच्च शिक्षा की प्रत्येक कक्षा में हिन्दी और अंग्रेजी विषय की भाँति अनिवार्य विषय कर दिया जाए तो व्यक्तियों को अपराध के विषय में जानकारी पर्याप्त मात्रा में हो सकती है। इससे शासन व्यवस्था में भी मदद मिलेगी तथा हर प्रकार के अपराधों में भी कमी आ सकती है। लेखक की यह पुस्तक कानूनी शिक्षा को धर्म से जोड़ने का एक नमूना है। इस पुस्तक को पढ़ने से जैन पाठक गण तो अपराध से बच ही सकते हैं। यदि एक व्यक्ति भी एक अपराध से भी बच जाता है तो मैं लेखक की इस पुस्तक के लेखन को सफल समझूँगी।

श्रीमती डॉ. दर्शना जैन

प्राक्कथन

वर्तमान समय में अशान्त वातावरण में व्यक्ति का जीवनयापन बहुत कठिनाई के साथ हो रहा है। इस प्रकार के अशान्त वातावरण को शान्त करने के लिए जैनदर्शन के सिद्धान्तों की अत्यावश्यकता है। जैनदर्शन के सिद्धान्तों को अपने जीवन में उपयोग करके वह सुखी हो सकता है। जैनदर्शन के सिद्धान्तों का पालन जहाँ अन्याय मार्ग में बढ़ते कदमों को रोकता है, वहीं आत्मशान्ति, समता तथा पाप से व्यक्ति को भीरू भी बनाता है। वास्तव में पाप से भय करने वाला व्यक्ति ही सुखी हो सकता है और जिसे अन्तरंग से पाप से भय नहीं है, वह पाप मार्ग में बढ़ता चला जाता है। ऐसे पाप के मार्ग में बढ़ते कदमों को रोकने के लिए दण्ड व्यवस्था प्रारम्भ की गई तथा एक व्यक्ति को दण्ड देकर समाज में जीवनयापन कर रहे अन्य व्यक्तियों को उस पाप मार्ग से हटाने का सराहनीय प्रयास सर्वप्रथम राजा आदिनाथ ने दण्ड व्यवस्था का शुभारम्भ किया। बाद में व्यक्ति के व्यवहार में अधिक उद्दण्डता आने से उनके लिए शारीरिक दण्ड व्यवस्था में बढ़ोतरी हुई।

जैनदर्शन सूक्ष्म सिद्धान्तों पर आधारित है। जिसमें हिंसादि पाँच पापों का तथा पाप के अन्य स्रोतों का सूक्ष्मता से विचार किया गया। यह सूक्ष्मता मनोगत है। जिस कारण पाप का फल निर्धारित नहीं है। व्यक्ति जैसे भावों से पाप करेगा वह वैसा फल पायेगा। जीवों के पाप-पुण्य का फल केवलीगम्य है। सामान्य बुद्धि वाले प्राणी पाप-पुण्य के फल की तत्कालीन समीक्षा करने में असमर्थ हैं। परन्तु भारतीय दण्ड संहिता में भावों से ज्यादा किए गये कार्य की समीक्षा की जाती है। जिससे अपराधी का सही आंकलन नहीं हो पाता। इससे भी अधिक आवश्यक अपराध के विषय में साक्ष्य प्रकट होने पर अपराधी दण्ड का भागीदार है अन्यथा

अपराधी को किसी भी प्रकार का दण्ड नहीं दिया जाता है। भारतीय दण्ड संहिता एवं जैनदर्शन के कुछ सिद्धान्तों को इस पुस्तक में समानता के रूप में प्रकट किया है। जिसमें जैनदर्शन के स्थूल पञ्चाणुव्रत रूप सिद्धान्तों की भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं से तुलना की गई है।

इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य धर्म से अनभिज्ञ तथा गुमराह व्यक्ति को समाज की व्यवहारिकता में जैनधर्म की उपयोगिता को समझाना है। जिसमें वह धर्म को केवल कर्मकाण्ड न माने अपितु धर्म धारण करने से वह रोजमर्रा में हो रहे पाप से तो बचता ही है अपितु कानून में भी अपराध करने से अपना बचाव करता है। जैनदर्शन के पञ्चाणुव्रतों की भावनाओं और अतिचारों का वर्णन करके उसमें यथासंभव भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं को समझा कर अतिचारों से बचकर एवं भावनाओं का पालन करके व्यक्ति भारतीय दण्ड संहिता की किन-किन धाराओं से बचाव कर सकता है, यह द्योतित किया गया है। पञ्चाणुव्रत में भावनाओं की अपेक्षा अतिचारों में भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं का अधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। भारतीय दण्ड संहिता में जहाँ अन्याय से उपार्जित धन, सम्पत्ति को परिग्रह की संज्ञा नहीं दी जबकि जैनदर्शन न्याय-अन्याय दोनों से आवश्यकता से अधिक उपार्जित धन, सम्पत्ति को परिग्रह कहता है।

इस पुस्तक में पञ्चाणुव्रतों का वर्णन करने के पश्चात् वर्तमान में घटित घटनाओं के द्वारा अणुव्रतों एवं धाराओं को समझाने का प्रयास किया गया है। जिसमें दृष्टान्तों में वर्णित नगरों एवं व्यक्तियों के नाम कल्पना पर आधारित हैं। अतः ये घटनाएँ काल्पनिक हैं।

प्रो. राजारामजी के द्वारा लिखित लेखों को पढ़ने के पश्चात् मेरे मन में यह भाव उत्पन्न हुए कि मैं **जैनदर्शन में पञ्चाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता** नामक पुस्तक लिखूँ। जिसका शुभारम्भ लगभग 11 माह पूर्व एक शोध लेख के रूप में हुआ। जिसका प्रारम्भ जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य

में अहिंसाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता लेख के रूप में मेरी धर्मपत्नि श्रीमती डॉ. दर्शना जैन ने राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान तिरुपति में आयोजित संगोष्ठी में प्रस्तुत किया तथा जैन विश्वभारती विश्वविद्यालय में आयोजित संगोष्ठी जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य में परिग्रह परिमाणाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता आलेख प्रस्तुत किया। इसके अतिरिक्त मुनि सुधासागरजी महाराज के सान्निध्य में टोंक नगर में आयोजित युवा संगोष्ठी में तत्त्वार्थसूत्र में वर्णित सत्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता आलेख मेरे द्वारा प्रस्तुत किया गया। इसके पश्चात् टोंक नगर में विद्वत् संगोष्ठी राजवार्तिक में वर्णित पञ्चाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता का प्रस्तुतिकरण भी मेरे द्वारा किया गया। जिसकी विद्वत् वर्ग के द्वारा सराहना की गई। इसके अतिरिक्त इन लेखों का प्रकाशन वर्धमान पत्रिका जयपुर में जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य में अहिंसाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता के रूप में, अनेकान्त पत्रिका दिल्ली में जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य में सत्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता के रूप में तथा वर्धमान महावीर पत्रिका कोल्हापुर में जैनदर्शन के परिप्रेक्ष्य में अचौर्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता के रूप में प्रकाशित हुए। इन लेखों ने विद्वत् जगत् में प्रशंसा प्राप्त की। इस सराहना को देखकर इस पुस्तक में पञ्चाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता की तुलना के साथ लगभग 25 कथानकों को जोड़कर समझाने का प्रयास किया है।

इस पुस्तक में परम पूज्य मुनि श्री सुधासागरजी महाराज ने परामर्श देकर इस पुस्तक को बहु उपयोगी बनाने में सफल निर्देशन देकर असीम कृपा की। प्रो. राजारामजी जैन के द्वारा इस विषय में फोनवार्ता से सहयोग किया गया तथा जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय के पूर्व निदेशक एवं वर्धमान पत्रिका के सम्पादक डॉ. पी. सी. जैन साहब के द्वारा महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए गए। इस केन्द्र के वर्तमान निदेशक प्रो. अनिलजी जैन के द्वारा भरपूर सहयोग दिया गया। अनेकान्त पत्रिका के सम्पादक डॉ. जयकुमारजी जैन एवं वीर सेवा मंदिर के सह निदेशक आलोककुमार जैन ने मेरे आलेख को प्रकाशित कराने में सहयोग दिया।

वर्धमान महावीर पत्रिका की सम्पादिका श्रीमती डॉ. सुषमा रोटे कोल्हापुर ने भी मेरे आलेख को अपनी पत्रिका में स्थान दिया। इस पुस्तक के भारतीय दण्ड सहिता सम्बन्धी धाराओं को देखने में हाईकोर्ट जयपुर के वरिष्ठ वकील श्रीमान् सुशीलकुमारजी जैन एवं सिविल कोर्ट केकड़ी के वकील श्रीमान् नितिन जी जैन ने अथक परिश्रम किया। इस पुस्तक के सम्पादन में मेरी धर्म पत्नि श्रीमती डॉ. दर्शना जैन ने अथक परिश्रम किया तथा पुस्तक के प्रकाशन में ब्र. भरत भैया ने जो अथक परिश्रम किया वह अविस्मरणीय है। सिविल कोर्ट खरगोन के सिविल जज श्रीमान् संजयजी जैन जिन्होंने इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखकर अनुग्रहीत किया। मुनिपुङ्गव सुधासागरजी महाराज के चरणों में आभार सहित नमोऽस्तु करता हूँ। मेरे पूज्यनीय पिता श्री विजय कुमारजी जैन तथा माता श्री श्रीमती सुशीला देवी जी जैन ने अशीम स्नेह से परिपूरित अपना आशीष दिया। इनके चरणों में वंदन करता हुआ आभारी हूँ तथा इन सभी महानुभावों का भी मैं ह्रदय से आभारी हूँ।

सतेन्द्रकुमार जैन

भूमिका

भारत धर्म प्रधान देश के साथ ही कर्म प्रधान देश भी है। इसमें जितना महत्त्व धर्म को दिया जाता है, उतना महत्त्व कर्म को भी दिया जाता है। धर्म की व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए पुण्य-पाप का विवेचन करके धार्मिक व्यक्तियों को पाप से बचने का निर्देश दिया है। परन्तु जो व्यक्ति धर्म से अनभिज्ञ हैं या धर्म में जिनकी आस्था नहीं है, उन व्यक्तियों के लिए राजा आदिनाथ ने सर्वप्रथम कर्म स्वरूप दण्ड का विधान किया। गलती करने वाले को पश्चाताप स्वरूप **हा** शब्द का विधान किया, जिसका अर्थ गलती को स्वीकार करना है। परन्तु मानव जब अपनी गलती को दुबारा करने लगा तो उसके लिए **हा** शब्द के साथ **मा** शब्द का प्रयोग भी होने लगा जिसका अर्थ नहीं करूँगा। इन दो दण्डों के प्रयोग के बाद भी जब मानव की प्रवृत्ति पाप कर्म से रहित नहीं हुई तो **धिक्** शब्द के द्वारा अपने को धिक्कार करने का दण्ड प्रचलित हुआ।[1]

राजा आदिनाथ के पश्चात् भरत चक्रवर्ती भारत वर्ष के राजा हुए। उनके समय में पाप कर्म की प्रवृत्ति अधिक होने लगी और पूर्व में निर्धारित दण्ड का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। तब भरत ने उनके लिए शारीरिक दण्ड को सुचारु रूप से चलाया और व्यक्ति के मन, वचन, काय की क्रिया के अनुसार न्याय-अन्याय कर उनको दण्ड देने का विधान किया। भरत चक्रवर्ती ने धर्म और कर्म के अनुसार दण्ड का स्वरूप निर्धारित किया। काल की प्रगति के साथ-साथ राजाओं की व्यवस्था में परिवर्तन हुआ और जीवों की मानसिकता में भी परिवर्तन हुआ। जिससे पाप-पुण्य प्रवृत्ति में भी अन्तर आया और उन पाप प्रवृत्तियों के दमन के लिए दण्डों की व्यवस्था में बढ़ोतरी होती गई। शनैः शनैः

राजाओं की व्यवस्था में भी अराजकता का प्रभाव पड़ा और लोगों ने राजतांत्रिक प्रणाली को छोड़कर लोकतांत्रिक प्रणाली का अनुशरण किया। अंग्रेजों के समय में लोगों ने लोकतंत्रात्मक प्रणाली की पूर्ण सहायता ली और भारतदेश में न्यायालय की स्थापना की। परन्तु इस व्यवस्था में भी अंग्रेजों ने देश-विदेश, अपने-पराये का भेद कर, भेद-भाव करना प्रारम्भ कर दिया। इससे लोगों को पूर्ण न्याय नहीं मिल पाया। लोगों ने न्यायाधीशों का विरोध किया तथा उनके द्वारा किए गए अन्याय का बहिष्कार किया। फलस्वरूप भारत में लार्ड मैकाले का आगमन हुआ तथा उसने 1835 में भारतीय दण्ड संहिता का प्रारूप तैयार किया और 1860 में यह कानून का प्रस्ताव पास हुआ तथा यह कानून 1 जनवरी 1862 में पूरे देश में लागू हुआ। लार्ड मैकाले ने संभवतः देश में शासन व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए देश में निवास कर रही विभिन्न जातियों के धार्मिक ग्रन्थों का आधार लिया तथा तत्कालीन परिस्थितियों को भी आधार बनाया। जिसमें भारतीय दण्ड संहिता की विभिन्न धाराओं का अध्ययन करने पर यह अनुमान स्वतः ज्ञात किया जा सकता है कि लार्ड मैकाले ने जैन ग्रन्थों का विधिवत् अध्ययन करके या तत्कालीन जैनों के अनुसार हो रहे आचरण को देखकर कानून व्यवस्था को संचालित करने का निर्णय लिया। जिसमें जैन साहित्य का अत्यधिक योगदान रहा। जब भारतदेश 1947 को स्वतंत्र हुआ तब स्वतंत्रता के पश्चात् भारतदेश की न्यायिक व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए संविधान का निर्माण किया गया। जिसमें लार्ड मैकाले के द्वारा तैयार भारतीय दण्ड संहिता को देखकर भारतीय विचारकों ने इसमें कुछ भी फेर बदल नहीं किया। जातिगत भेदभाव, क्षेत्रगत भेदभाव, व्यक्तिगत भेदभाव से रहित कानून को यथावत् संचालित किया। इसमें कानून का निर्माण करते समय धार्मिक भावनाओं को और कर्म को पूर्ण महत्त्व दिया गया है। जिससे कानून के द्वारा किए गए निर्णयों में धर्म का पूर्ण सहारा लिया गया।

वर्तमान में लोगों की मान्यता केवल कानून के प्रति ही रह गई है।

कानून क्या कहता है ? यह लोगों के लिए महत्त्वपूर्ण है। परन्तु धार्मिक व्यक्ति धर्म के अनुसार अपना आचरण करता है तो वह स्वयमेव कानून का पालन करता ही है। जो व्यक्ति धर्म से अनभिज्ञ होकर धार्मिक आचरण नहीं करते, उनको कानून का पालन बलपूर्वक करवाया जाता है। धार्मिक आचरण करने वाला व्यक्ति पाप से डरता है। जिस कारण वह पाप की क्रिया नहीं करता, वह अपनी सीमा में रहता है और कानून भी पाप के नाश के लिए बनाया गया है। समाज के सभी व्यक्तियों का आचरण धर्म के अनुसार हो जाएगा तो समाज स्वयमेव पाप रहित हो जाएगा तथा कानून की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी। कानून का प्रयोग दुष्ट एवं दुराचारी व्यक्तियों के लिए किया जाता है और दुराचरण का नाश, समाज का उत्थान कानून का मुख्य उद्देश्य है।

वर्तमान भारतीय संविधान के निर्माण के लिए प्रारूप समिति का निर्माण किया गया। जिसमें संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद नियुक्त हुए तथा प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर नियुक्त हुए। इनके अतिरिक्त महात्मागाँधी, जवाहरलाल नेहरु, सरदारबल्लभ भाई पटेल, डॉ. राधाकृष्णन, डॉ. सच्चिदानन्द सिन्हा आदि गणमान्य व्यक्तियों का सहयोग मिला। इनमें से लगभग सभी सदस्य सभी दर्शनों के जानने वाले सूक्ष्मवेत्ता थे। धर्म के रहस्य को समझने वालों ने सभी दर्शनों से महत्त्वपूर्ण तथ्यों को लेकर संविधान का निर्माण किया। जिनमें जैनदर्शन का अत्यधिक सहयोग रहा। लार्ड मैकाले के द्वारा बनाई गई भारतीय दण्ड संहिता पर जैनदर्शन के स्थूल नियमों का तथा भावनाओं के पूर्ण प्रभाव को देखकर समिति ने इसे यथावत् रखा। इनमें मुख्य पञ्च व्रत हैं, जो जैनधर्म और भारतीय दण्ड संहिता की मुख्य धरोहर हैं।

जैनदर्शन और भारतीय दण्ड संहिता में आचार और विचार व्यक्तित्व के समान शक्ति वाले दो पक्ष कहे गये हैं। दोनों अन्योन्याश्रित

हैं। विचारों के आधार पर ही हमारा आचरण पलता है तथा आचरण से ही विचारों में स्थिरता आती है। इन दोनों पक्षों के सन्तुलित विकास होने पर ही व्यक्तित्व का विशुद्ध विकास होता है। इस प्रकार के विकास को हम ज्ञान और क्रिया का विकास कह सकते हैं। जो दुःख से मुक्ति के लिए अनिवार्य है।

आचार और विचार की एक-दूसरे पर इसी निर्भरता को दृष्टिगत रखते हुए भारतीय तत्त्व चिन्तकों ने धर्म और दर्शन का साथ-साथ प्रतिपादन किया। उन्होंने एक ओर जहाँ तत्त्वज्ञान की प्ररूपणा कर दर्शन की स्थापना की है, वहीं दूसरी ओर आचार-शास्त्रों का निरूपण कर साधना का मार्ग प्रशस्त किया है। भारतीय परम्परा में आचार को धर्म तथा विचार को दर्शन कहा गया है।

जैन परम्परा में आचार और विचार को समान स्थान दिया गया है। अहिंसा मूलक आचार और अनेकान्त मूलक विचार का प्रतिपादन जैन परम्परा की प्रमुख विशेषता है।

❑❑❑

व्रत का स्वरूप

व्रत का अर्थ पाप रहित जीवन व्यतीत करना है तथा असामाजिक और छुपकर किये जाने वाले कार्य को पाप कहते हैं अर्थात् जो आत्मशांति का पतन कराये वह पाप है तथा जो पाप से आत्मा को रोके अथवा मोक्ष की ओर ले जाए वह व्रत है। आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने व्रत की परिभाषा में कहा है- **इदं कर्त्तव्यमिदं न कर्त्तव्यं इति व्रतं** अर्थात् यह करने योग्य है यह नहीं करने योग्य है, ऐसा नियम करना व्रत है।[2] इससे समाज में बैर विरोध बढ़ाने वाली प्रवृत्तियों पर नियंत्रण होता है। जैनाचार्यों ने व्रत के पाँच भेद किये हैं, जिनमें अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह व्रत हैं।[3] इन पञ्च व्रतों पर जैन शास्त्रों में बहुत जोर दिया गया है। जैन साधना का मूलाधार ये पञ्चव्रत हैं। इस पर ही जैन साधना का भवन टिका है। इसके अभाव में साधना की शुरुआत ही नहीं हो सकती है। पाँच व्रतों के परिपालन के लिए व्रतों के दो स्तर स्थापित किए गए हैं। प्रथम है साधु मार्ग और द्वितीय श्रावक मार्ग या गृहस्थ मार्ग। इन्हें क्रमशः साधु धर्म और श्रावक धर्म भी कहते हैं। साधु मार्ग निवृत्तिमूलक है। हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील, परिग्रह रूपी पाँच पापों के परिपूर्ण त्याग से यह प्रारम्भ होता है। साधना का राजमार्ग यही है, क्योंकि ये पाँच पाप ही हमारे आत्मविकास के सबसे बड़े अवरोधक हैं। इनसे विमुख हुए बिना आध्यात्मिक आनन्द आ ही नहीं सकता। श्रावक मार्ग या गृहस्थ मार्ग का निर्वाह उक्त पापों के आंशिक त्याग से होता है। इसका पालन समाज में रहने वाले मनुष्य अपनी क्षमता के अनुरूप करते हैं। गृहस्थ मार्ग त्याग और भोग के बीच संतुलित जीवन जीने की पद्धति है। साधु जीवन में जहाँ आध्यात्मिक जीवन मूल्यों के क्रमिक विकास के साथ-साथ मानवीय गुणों का संचार होता है। साधु धर्म व्यक्ति को आत्मकेन्द्रित बनाकर पूर्ण निवृत्ति का मार्ग

प्रशस्त करता है और श्रावक धर्म मानव मात्र में नैतिक और धार्मिक गुणों का आरोपण कर एक श्रेष्ठ इंसान बनाता है। इस तरह हम साधु धर्म को व्यक्ति धर्म तथा श्रावक धर्म को समाज धर्म भी कह सकते हैं। समस्त जैनाचार, श्रावकाचार या गृहस्थाचार तथा श्रमणाचार या साध्वाचार के रूप में विभाजित है। जैनदर्शन में साधु पाप का स्वतः त्यागी होता है तथा भारतीय दण्ड संहिता पाप से बचाने के लिए दण्ड का विधान करता है। इसलिए भारतीय दण्ड संहिता में जैन साधुओं के लिए दण्ड का विधान नहीं किया गया है। परन्तु श्रावक पाप क्रियाओं को करता है तथा व्रतों में अतिचार लगाकर पाप का अर्जन भी करता है तो भारतीय दण्ड संहिता श्रावकों को पाप से बचाने के लिए तथा व्रतों की रक्षा के लिए श्रावक का पूर्ण सहयोगी है। परन्तु यदि साधु पाप का कार्य करते हैं तो वह साधु भी श्रावक की तरह दण्ड का भागीदार है। इसी क्रम में पाँच व्रतों की तुलना भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं से करने का प्रयास किया जा रहा है जिसमें श्रावक को कानून और धर्म के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करने का सूक्ष्म प्रयास किया गया है। व्रतों की रक्षा के लिए आचार्यों ने मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना, समरम्भ, समारम्भ, आरम्भ, क्रोध, मान, माया, लोभ के वशीभूत होकर तीव्र, मंद, ज्ञात, अज्ञात,अधिकरण तथा शक्ति के अनुसार 108 प्रकार के पापों से बचने का निर्देश दिया है।[4]

जैनधर्म का भारतीय दण्ड संहिता में पूर्ण प्रभाव पड़ा है। भारतीय दण्ड संहिता में भी पाप की मन, वचन, काय तथा कृत, कारित, अनुमोदना के अनुसार समीक्षा करके अपराधी को सजा दी जाती है। भारतीय दण्ड संहिता में इसे नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त कहते हैं। यदि अपराधी ने हत्या पाप को स्वयं किया है तो उसके लिए धारा 302 के तहत मृत्यु दण्ड या आजीवन कारावास की सजा मिलती है तथा अपराधी किसी से हत्या पाप कराता है तो वह धारा 302 के तहत आजीवन कारावास तथा अपराध में षड्यंत्र होने के कारण धारा 120 ख के तहत छह माह तथा अपराध में दुष्प्रेरण करने के कारण 115 के अनुसार सात

साल की सजा तथा जुर्माना दोनों का पात्र होता है। हत्या पाप में अनुमोदना अर्थात् प्रशंसा करने वाला भी साक्ष्य के प्रमाणित होने पर अपराधी की श्रेणी में गिना जाता है। जिसके लिए धारा 115 के अनुसार 7 साल कारावास की सजा मिलती है। इसी प्रकार जैनदर्शन में तीव्र एवं मंद परिणामों के आशय से किए गए पाप की सजा अलग होती है, चाहे उससे पाप हुआ हो अथवा न हुआ हो किन्तु अपराध के प्रति आरोपी के द्वारा पाप करने का प्रयास किया गया। इस कारण सजा का हकदार समझा जाता है। परन्तु भारतीय दण्ड संहिता में तीव्र मंद परिणामों का प्रभाव नहीं पड़ता, पाप के कारित पर प्रभाव पड़ता है।

जैनधर्म में पाप के दण्ड के लिए परिस्थिति पर भी ध्यान दिया है। आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने कहा है कि **तीव्रमंदज्ञाताज्ञातभावाधिकरण वीर्यविशेषभ्यस्तद्विशेषः** अर्थात् पाप तथा पुण्य के परिणाम में तीव्र, मंद, ज्ञात, अज्ञात भावों से तथा आधार और शक्ति के अनुसार विशेषता आती है।[5] यदि कोई व्यक्ति तीव्र परिणामों से पाप क्रिया का संचालन करता है तो पाप कर्म का बंध भी तीव्रता से होता है तथा मंद परिणामों से मंद बंध होता है तथा जानकर क्रिया करने पर अधिक पाप का बंध होता है तथा अनजाने में की गई क्रिया में पाप कर्म कम बंध होता है उसी प्रकार डण्डे आदि कमजोर वस्तु से वार करने में घात कम होता है तथा तलवार आदि शक्तिशाली वस्तु से वार करने पर अधिक घात होता है तथा मृत्यु भी हो जाती है तथा शक्तिशाली व्यक्ति के वार करने पर अधिक हिंसा तथा शक्तिहीन व्यक्ति के वार करने पर कम हिंसा होती है। जैनदर्शन में शक्तिशाली व्यक्ति तीव्र परिणामों से जानकर तलवार आदि से वार करता है तो अधिक पाप लगता है तथा शक्तिहीन व्यक्ति मंद परिणामों से अनजाने में थप्पड, डण्डे आदि से वार करता है तो कम पाप लगता है। परन्तु कानून में किए गए कार्य एवं परिस्थिति के अनुसार सजा का विधान है न कि तीव्र मंद परिणामों के अनुसार सजा का विधान है।

❑❑❑

कषाय	व्यक्ति	भाव	आधार	परिणाम	धारा	सजा	परिणाम	धारा	सजा
तीव्र एवं मंद	शक्तिशाली	ज्ञात	तलवार	मृत्यु	302	मृत्यु दण्ड	घायल	307	आजीवन कारावास
तीव्र एवं मंद	शक्तिहीन	ज्ञात	तलवार	मृत्यु	302	मृत्यु दण्ड	घायल	307	आजीवन कारावास
तीव्र एवं मंद	शक्तिशाली	अज्ञात	तलवार	मृत्यु	304	दस वर्ष तक कारावास	घायल	308	7 साल एवं जुर्माना
तीव्र एवं मंद	शक्तिहीन	अज्ञात	तलवार	मृत्यु	304	आजीवन कारावास	घायल	308	7 साल एवं जुर्माना
तीव्र एवं मंद	शक्तिशाली	ज्ञात	डण्डे	मृत्यु	302	मृत्यु, आजीवन कारावास	घायल	307	आजीवन कारावास
तीव्र एवं मंद	शक्तिहीन	ज्ञात	डण्डे	मृत्यु	302	मृत्यु, आजीवन कारावास	घायल	307	आजीवन कारावास
तीव्र एवं मंद	शक्तिशाली	अज्ञात	डण्डे	मृत्यु	304	आजीवन कारावास या 10 वर्ष	घायल	325	7 वर्ष तथा जुर्माना
तीव्र एवं मंद	शक्तिहीन	अज्ञात	डण्डे	मृत्यु	325 या 304, तथ्यों के आधार पर		घायल	325या 304, तथ्यों के आधार पर	

अहिंसाणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता

अहिंसा जैनाचार का प्राण तत्त्व है। इसे ही परमब्रह्म और परमधर्म कहा गया है। अहिंसा का जितना सूक्ष्म विवेचन और आचरण जैन परम्परा में मिलता है, उतना किसी अन्य परम्परा में नहीं। अहिंसा का मूलाधार आत्म साम्य है। प्रत्येक आत्मा चाहे वह सूक्ष्म हो या स्थूल, स्थावर हो या त्रस, तात्त्विक दृष्टि से समान है। सभी जीवों में एक ही सी आत्मा का वास है। सुख–दुःख का अनुभव प्रत्येक प्राणी को होता है। जीवन–मरण की प्रतीति सब करते हैं। जिस प्रकार हमें जीवन प्रिय है मरण अप्रिय, सुख प्रिय है दुःख अप्रिय, अनुकूलता प्रिय है प्रतिकूलता अप्रिय, लाभ प्रिय है हानि अप्रिय, स्वतंत्रता प्रिय है परतंत्रता अप्रिय, उसी प्रकार अन्य प्राणियों को भी जीवन आदि प्रिय है तथा मरण आदि अप्रिय, इसलिए हमारा कर्त्तव्य है कि हम मन से भी वध आदि की बात न सोचें। शरीर से किसी को कष्ट पहुँचाना तो पाप है ही, वचन से भी इस प्रकार की प्रवृत्ति करना पाप है। मन, वचन और काय से किसी भी प्राणी को कष्ट पहुँचाने की अपेक्षा बचाये रखना ही सच्ची अहिंसा है। वनस्पति आदि एकेन्द्रिय प्राणी से लेकर मानव तक के प्रति अहिंसक आचरण की भावना जैन परम्परा की प्रमुख विशेषता है। इसे अहिंसक आचार का परमोत्कर्ष भी कहा गया है। आचार का यह अहिंसक विकास जैन संस्कृति की अनमोल निधि है।

अहिंसा व्यवहार योग्य

जैनधर्म में प्रतिपादित अहिंसा के मर्म को न समझ पाने के कारण कुछ लोग इसे कायरता की जननी समझते हैं तथा कुछ लोग ऐसे भी हैं जो सिद्धान्ततः इसे श्रेष्ठ समझते हुए भी उसे व्यवहार योग्य नहीं मानते हैं। उनका यह मानना है कि अहिंसा अच्छी चीज होते हुए भी उसे पाला

नहीं जा सकता, इसलिए वह अव्यवहार्य है। यह नासमझी का ही परिणाम है। न तो अहिंसा कायरता है और न ही वह ऐसी है कि उसको पाला ही न जा सके, जिससे उसे अव्यवहार्य कहा जा सके। हिंसा और अहिंसा के स्वरूप पर गहराई से विचार करने पर उक्त आशंका को स्थान ही नहीं मिलता।

किसी जीव को मात्र मारना ही हिंसा नहीं है। हिंसा और अहिंसा का सम्बन्ध तो हमारे भावों, परिणामों, (विचारों) से है। इसे हमें व्यापक अर्थों में समझना चाहिए। यूँ तो संसार में सर्वत्र जीव भरे हैं तथा वे प्रति समय अपने-अपने निमित्तों से मरते रहते हैं। इतने मात्र से कोई हिंसक नहीं हो सकता। जैनधर्म के अनुसार हिंसा रूप परिणाम होने पर ही किसी को हिंसक कहा जा सकता है। हिंसा की परिभाषा बताते हुए आचार्य अकलंकदेव ने राजवार्तिक में कहा है कि - **प्रमत्तयोगात् प्राण व्यपरोपणं हिंसा**[6] अर्थात् जब कोई प्रमादी बनकर, जान-बूझकर, असावधानी अथवा लापरवाही से किसी भी जीव का घात करता है अथवा कष्ट पहुँचाता है, तभी उसे हिंसक कहा जा सकता है। आशय यह है कि हिंसा तीन परिस्थितियों में होती है। पहली जान बूझकर - अभिप्राय पूर्वक, दूसरी असावधानी या लापरवाही जन्य तथा तीसरी हिंसा न चाहते हुए भी पूर्ण सावधानी बरतने पर भी, अचानक या अनायास किसी जीव का वध हो जाने पर। जब कोई स्वार्थ प्रेरित व्यक्ति कषाय के वशीभूत हो किसी पर वार करता है तो यह हिंसा कषाय प्रेरित हिंसा कहलाती है तथा जब हमारी असावधानी या लापरवाही से किसी का घात होता है अथवा किसी को कष्ट पहुँचता है तो वह हिंसा असावधानीकृत हिंसा कही जाती है। लेकिन पर को कष्ट पहुँचाने की भावना से शून्य पूरी तरह से सावधान व्यक्ति द्वारा यदि अनायास किसी प्राणी का घात हो जाता है तो उक्त परिस्थिति में उसे हिंसक नहीं कहा जा सकता। इस बात को स्पष्ट करते हुए आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी कहते हैं कि -

उच्चालिदाम्मि पादे इरियासमिदस्स णिग्गमट्ठाणे
आबाधेज्ज कुलिंगो मरेज्ज तं जोगमासेज्ज
णहि तस्स तण्णिमित्तो बन्धो सुहुमोवि देसिदो समये

यदि कोई मनुष्य सावधानी पूर्वक जीवों को बचाते हुए देखभाल कर चल रहा है, फिर भी यदि कदाचित् कोई जीव उसके पैरों के नीचे आकर मर भी जाए तो उसे तज्जन्य हिंसा सम्बन्धी सूक्ष्म पाप भी नहीं लगता, क्योंकि उसके मन में हिंसा के भाव नहीं है तथा वह सावधान है।[7]

इसके विपरीत यदि कोई मनुष्य मेरी इस प्रवृत्ति से किसी का घात हो रहा है या नहीं किसी को कष्ट पहुँच रहा है या नहीं, इस बात का विचार किये बिना एकदम लापरवाही और असावधानी से चल रहा है तो उसे हिंसा निमित्तक पाप अवश्य लगेगा भले ही जीव का वध हो या न हो। आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा है कि-

मरदु व जियदु व जीवा अयदाचारस्स णिच्छिदा हिंसा।
पयदस्स णत्थि बंधो हिंसा मित्तेण समिदस्स॥

यदि कोई असावधानीपूर्वक अयत्नाचारी बनकर अपनी प्रवृत्ति कर रहा है तो जीव मरे या न मरे, उसे तज्जन्य पाप से कोई बचा नहीं सकता तथा सावधानी से प्रयत्न पूर्वक चलने वाले मनुष्य द्वारा हिंसा हो जाने पर भी वह पाप का भागीदार नहीं होता।[8]

हिंसा और अहिंसा की उक्त धारणा से स्पष्ट है कि हिंसा और अहिंसा हमारे भावों पर ही निर्भर है। द्रव्य हिंसा ही हिंसा नहीं। वस्तुतः भाव हिंसा भी वास्तविक हिंसा है। आशय यह है कि किसी को कष्ट पहुँचाने या घात होने पर भी कोई व्यक्ति तब तक हिंसक नहीं कहा जा सकता। जब तक कि उसका वैसा अभिप्राय नहीं हो अथवा असावधानी न हो। इसके विपरीत यदि किसी का अभिप्राय किसी के घात करने का हो तथा बहुत कोशिश करने पर भी वह उसका कुछ अनिष्ट न कर सका हो तो वह जीव हिंसक ही माना जाएगा। दूसरों का अहित चाहने वाला

सबसे पहले अपना अहित करता है। कहा भी है-

स्वयमेवात्मनात्मानं हिनस्त्यात्मा प्रमादवान्
पूर्वं प्राण्यन्तराणां तु पश्चाद् स्याद्वा न वा वधः ।। [१]

इसीलिए जैनदर्शन में हिंसा को द्रव्य हिंसा और भाव हिंसा के भेद से दो भागों में विभाजित किया गया है। जब किसी का घात हो जाता है तब वह द्रव्य हिंसा कहलाती है तथा किसी को मारने या सताने के अभिप्राय अथवा असावधानी के भाव को भाव हिंसा कहते हैं। वस्तुतः भाव हिंसा ही हिंसा है। भाव हिंसा से सम्बन्ध होने पर ही द्रव्य हिंसा, हिंसा कहलाती है, किन्तु द्रव्य हिंसा के होने पर भाव हिंसा अनिवार्य नहीं। अतः हमारे भावों के अनुसार ही हिंसा और अहिंसा का समीकरण बनता है।

भावों पर आधारित हिंसा और अहिंसा की उक्त व्याख्या से स्पष्ट है कि पूर्ण सावधानी से प्रवृत्ति करने वाले, हिंसा की भावना से रहित मनुष्य के द्वारा यदि किसी जीव का घात हो जाता है तो वह उसके पाप का भागीदार नहीं है। अतः अहिंसा को अव्यवहार्य नहीं कहा जा सकता। हमारा तो यही कर्त्तव्य है कि हम अपने स्वार्थ से प्रेरित होकर किसी को कष्ट पहुँचाने का कभी भाव न करें तथा हमारी प्रवृत्ति से जीवों का कम से कम घात हो, इस बात को ध्यान रखकर अपने जीवन का निर्वाह करें। हमारी प्रवृत्ति में जितनी सावधानी होगी हम उतने ही अहिंसक होंगे।

अहिंसा कायरता अथवा मानवता

जैनधर्म के सभी तीर्थंकर क्षत्रिय वंश के थे। उन्होंने राष्ट्र की रक्षा एवं स्वेच्छाचारी राजाओं के कुशासन को कुचलने के लिए अपने जीवन में अनेक बार दिग्विजय यात्राएँ करके समस्त राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधा था। मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त, मेघवाहन सम्राट खारबेल एवं वीर सेनापति चामुण्डराय जैसे अनेक जैन वीर योद्धा हुए, जिन्होंने अपने रण कौशल से राष्ट्र की रक्षा कर भारतीय इतिहास को गौरवान्वित किया है। वस्तुतः

जैनधर्म उन क्षत्रियों का धर्म था, जो युद्ध स्थल में दुश्मन का तलवार से सत्कार (सामना) करना जानते थे और क्षमा करना भी जानते थे। जैनधर्म के अनुसार अपने अस्तित्व और स्वाभिमान की रक्षा के लिए अस्त्र उठाना अपराध नहीं, धर्म है। उनकी लड़ाई न्याय के लिए न्यायपूर्वक होती थी। जैन राजनीति के व्याख्याता आचार्य सोमदेव सूरि ने इसी बात को स्पष्ट करते हुए कहा है कि रणाङ्गण में अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित शत्रु तथा देशद्रोही व्यक्ति पर ही राजागण अपने शस्त्र का प्रहार करते हैं, न कि कमजोर, निहत्थे, कायरों और सदाशयी निरपराध पुरुषों पर। कहा है कि-

यः शस्त्र सहितो समरे रिपुः स्यात्, यः कण्टको वा निजमण्डलस्य।
अस्त्राणि तत्रैव नृपाः क्षिपन्ति, न दीनकानीन शुभाशयेषु।। [10]

अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित होकर रणाङ्गण में जो शत्रु बनकर आया हो या अपने देश का दुश्मन बनकर आया हो, राजा गण उसी पर अपने अस्त्र का प्रहार करते हैं, दीन शुभाशयी में नहीं करते हैं। जैन राजनीति का यही आधार है। इस न्यायपूर्ण युद्ध में भी इसकी अहिंसा खण्डित नहीं होती।

हिंसक और अहिंसक में अंतर

1. हिंसक भी शत्रु से युद्ध करता है और अहिंसक भी दोनों के द्वारा युद्ध में भीषण नरसंहार होता है। फिर भी हिंसक निर्दयी और अहिंसक दयालु ही बना रहता है, क्योंकि वह अपने इस कृत्य पर प्रसन्न नहीं होता। वह सिर्फ हिंसा के लिए हिंसा का रास्ता नहीं अपनाता, अपितु परिस्थितियों के कारण उसे हिंसा करनी पड़ती है।

2. हिंसक और अहिंसक की मानसिकता में महान् अन्तर होता है।

3. हिंसक के अन्दर है आक्रमण, अहिंसक के अन्दर है केवल रक्षा,

4. हिंसक के हृदय में रहता है द्वेष और अहिंसक के हृदय में रहती है क्षमा।

5. हिंसक को अपने द्वारा किए गए नरसंहार को देखकर हर्ष होता है तो अहिंसक को होता है पश्चाताप।

अपनी इसी मनःस्थिति के कारण गृहस्थ अपनी छोटी-मोटी अपरिहार्य हिंसाओं के होने पर भी अहिंसक बना रहता है। वस्तुतः वह हिंसक नहीं है। हिंसा वह करना नहीं चाहता, उसे करनी पड़ती है।

इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि अहिंसा कायरता नहीं है। जीवन से पलायन भी अहिंसा का उद्देश्य नहीं है। अहिंसा तो व्यवहारिक जीवन को सन्तुलित बनाकर स्व और पर के घात से बचने का उपाय है। अहिंसा कायरता नहीं, अपितु मानव में मानवता को प्रतिष्ठित करने का अनुष्ठान है।

हिंसा के भेद

प्राचीन आचार्यों ने हिंसा का सूक्ष्म रहस्य समझाने के लिए तथा अहिंसा का व्यवहारिक रूप से पालन हो सके, इसलिए हिंसा के चार भेद किए हैं -

1. संकल्पी हिंसा
2. आरम्भी हिंसा
3. उद्योगी हिंसा
4. विरोधी हिंसा।[11]

संकल्पी हिंसा

संकल्प पूर्वक किसी जीव का घात करना अथवा उसे कष्ट पहुँचाना संकल्पी हिंसा है। कसाइयों द्वारा प्रतिदिन असंख्य पशुओं को मौत के घाट उतारा जाना इसी संकल्पी हिंसा का परिणाम है। आतंकवादी, जातीय संघर्ष, साम्प्रदायिक दंगों एवं अपने मनोरंजन अथवा माँसाहार के

लिए शिकार आदि करना या कराना इसी संकल्पी हिंसा की पर्यायें हैं। इसके अतिरिक्त, धर्म के नाम पर की जाने वाली पशुओं की बलि तथा शिकार करना भी इसी संकल्पी हिंसा की कोटि में आती हैं।

आरम्भी हिंसा

घरेलू कामकाजों में दैनिक कार्यों के निमित्त से जो हिंसा होती है, वह आरम्भी हिंसा कहलाती है। इसके अन्तर्गत भोजन बनाना, झाड़ना-बुहारना, नहाना-धोना आदि क्रियाएँ आती हैं।

औद्योगिक हिंसा

गृहस्थ को अपने जीवन निर्वाह के लिए अर्थोपार्जन अनिवार्य है। उसके लिए खेती-बाड़ी, नौकरी, व्यवसाय अथवा उद्योग आदि करना पड़ते हैं। इनमें होने वाली हिंसा, औद्योगिक हिंसा कहलाती है।

विरोधी हिंसा

अपने तथा अपने कुटुम्बियों के जान-माल की रक्षा के लिए अथवा धर्म, धर्मायतन, तीर्थ, मन्दिर एवं संतों पर आने वाली बाधाओं के निराकरण के लिए तथा अपने राष्ट्र के अस्तित्त्व की रक्षा करने के लिए, आतताइयों अथवा आक्रमणकारियों से मुकाबला करते हुए जो हिंसा करनी पड़ती है, वह विरोधी हिंसा है।

इन चारों प्रकार की हिंसाओं में से श्रावक संकल्पी हिंसा का पूर्ण रूप से त्यागी होता है। शेष तीन हिंसाओं का वह चाहते हुए भी सर्वथा त्याग नहीं कर सकता, मात्र उनकी मर्यादा कर सकता है। उसको अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आरम्भी व उद्योगी हिंसा करनी ही पड़ती है। अतः उक्त दोनों प्रकार की हिंसा उसके लिए अपरिहार्य है। इतना होने पर भी वह यद्वा-तद्वा कोई भी कार्य नहीं करता है। वह अपनी प्रत्येक क्रियाओं में पूर्ण सावधानी रखता हुआ यत्नाचारी

प्रवृत्ति करता है। अपने व्यवसाय में भी वह इसका ध्यान रखता है। उस प्रकार के व्यवसाय को वह भूलकर भी नहीं अपनाता, जिसमें जीवों की अधिक हिंसा होती हो, साथ ही बहुजीव-वधकारी उद्योग भी वह नहीं खोलता है।

इसी तरह विरोधी हिंसा से भी वह नहीं बच पाता। यद्यपि वह स्वयं किसी से भी अकारण बैर विरोध नहीं लेता, किन्तु यदि कोई उस पर आक्रमण करे तो वह उससे बचने के लिए डटकर मुकाबला करता है। आक्रमणकारी, आततायी, अत्याचारी का सामना कर उसे सबक सिखाना ही गृहस्थ की विरोधी हिंसा का अभिप्रेत अर्थ है। वह उसके लिए क्षम्य है। उसके बिना समाज में अराजकता बढ़ जाएगी। यदि कोई देश पर आक्रमण कर हमारे अस्तित्त्व को चुनौती देता है तो इस भावना से कि इससे व्यर्थ में खून बहेगा, डरकर मुँह छुपाना अहिंसा नहीं कायरता है। अहिंसा कायरता नहीं, वह तो वीरों का भूषण है, क्षत्रियों का धर्म है।

भारतीय दण्ड संहिता में हिंसा के दो भेदों के स्वरूप का वर्णन है, जिसमें जैनधर्म में कही गई आरम्भी हिंसा तथा उद्योगी हिंसा को नहीं गिना, क्योंकि भारतीय कानून में व्यवहारिक पक्षों पर अधिक ध्यान दिया जाता है। जिस प्रकार जैनधर्म में संकल्पी हिंसा तथा अन्य हिंसा के भेदों में व उनके फलों में अन्तर है तथा संकल्पी हिंसा को श्रावक को सर्वथा त्यागने का निर्देश दिया है। भारतीय दण्ड संहिता में संकल्पी हिंसा को इरादतन हिंसा अथवा सोची समझी साजिश का नाम देकर निकृष्ट अपराध की कोटी में गिना गया है। संकल्पी हिंसा वाले अभियोजक को मुख्य अपराधी माना गया है, क्योंकि उसमें पूर्वबद्ध योजना के अनुसार अपराध की कड़ियों का अनुशरण किया है। वहीं जैनदर्शन कहता है कि योजना बद्ध रूप से अपराध करने पर जब से संकल्प लिया गया है तभी से पाप का आस्रव, बंध प्रारम्भ हो जाता है तथा कानून कहता है कि जब से अपराध के प्रति योजना का संकल्प लिया जाता है, तभी से वह अपराधी माना जाता है। संकल्पी हिंसा में सभी प्रकार के अपराधों की समीक्षा कर निकृष्ट पाप करने के प्रति

अपराधी कारणों का प्रयोग करता है। संकल्पी हिंसा वाले अपराधी के लिए भारतीय दण्ड संहिता में धारा 302 के तहत मृत्यु दण्ड अथवा आजीवन कारावास की सजा का प्रावधान है। वही संकल्पी हिंसा से विपरीत गैर इरादतन हिंसा के लिए धारा 304 एवं 304 अ के तहत संकल्पी हिंसा से कम आजीवन कारावास तक ही सजा का प्रावधान है तथा जहाँ जैनदर्शन में विरोधी हिंसा को श्रावकों के लिए क्षम्य कहा है। जिससे धर्म, देव, शास्त्र, गुरु, माता, पिता, परिवार तथा स्वयं की रक्षा तथा देश की रक्षा के लिए विरोध प्रदर्शन करता है इसमें अपनी तथा अपने आश्रित लोगों की रक्षा करते समय यदि विपक्ष की हिंसा हो जाती है तो वह हिंसा, हिंसा होते हुए भी क्षम्य है। भारतीय दण्ड संहिता में विरोधी हिंसा के विषय में कथन है कि यदि कोई व्यक्ति अपने अथवा अपने आश्रित व्यक्ति की रक्षा करने के प्रयास में उसके द्वारा विपक्ष की हिंसा भी हो जाती है तो वह दण्ड में राहत का भागीदार है तथा ऐसी परिस्थिति जिसमें अपनी रक्षा के लिए विपक्षी की हिंसा हो जाती है परन्तु इरादा अपनी तथा विपक्षी दोनों की हिंसा का नहीं था तो अपराधी धारा 96 से 106 के तहत दण्डनीय नहीं है, क्षमा के योग्य माना गया है। परन्तु हिंसा के अतिरेक की स्थिति में धारा 304 केअन्तर्गत दण्डनीय है।

भारतीय दण्ड संहिता एवं जैनधर्म के इन सिद्धान्तों में साम्यता होने के बावजूद भी जैनधर्म बिना साक्ष्य के मन, वचन, काय की प्रवृत्ति के अनुसार पाप-पुण्य कर्म के बंध का कारण बताता है, परन्तु भारतीय दण्ड संहिता साक्ष्य के अभाव में सत्य बात को भी असत्य गिनता है तथा साक्ष्य होने पर वास्तविक निर्णयों का व्याख्यान करता है। जैसे-यदि कोई व्यक्ति विरोधी हिंसा में अपनी रक्षा करता हुआ विपक्ष के व्यक्ति की हत्या कर देता है तो जैनधर्म उस श्रावक को क्षम्य समझ लेता है, परन्तु भारतीय दण्ड संहिता साक्ष्य के सत्यापित होने पर क्षम्य मान सकता है और साक्ष्य के अभाव में वह संकल्पी हिंसा के समान अपराधी होकर धारा 302 के तहत मृत्यु दण्ड अथवा आजीवन कारावास सजा का पात्र है।

अहिंसाणुव्रत की भावनाएँ

वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपण समित्यालोकितपान भोजनानि पञ्च[12] अर्थात् वचनगुप्ति, मनोगुप्ति, ईर्यासमिति, आदाननिक्षेपण समिति, आलोकित पान भोजन ये अहिंसा व्रत की पाँच भावनाएँ हैं। यदि अहिंसा व्रत की सूक्ष्म रूप से रक्षा करना है तो इन पाँच भावनाओं को अन्तरंग से पालन करना अत्यावश्यक है। वचनगुप्ति में कष्टदायक व्यर्थ वचनों के प्रयोग का निषेध किया है तथा मनोगुप्ति में मन से अशुभ ध्यान से बचकर आत्म हितकारी विचारों में लगने का विधान किया है तथा किसी प्राणी को हमारे चलने पर बाधा न हो इस कारण देखकर चलने को कहा गया है। जिसे ईर्यासमिति नाम दिया है तथा आदाननिक्षेपण समिति में देखभाल कर वस्तु को उठाने, रखने पर व्यर्थ के प्रमाद से हिंसा से बचा जा सकता है तथा दिन में भोजन करने पर रात्रिभोजन का त्याग करने का विधान है।

इन पाँच भावनाओं में कृत, कारित, अनुमोदना से पालन करने को आवश्यक कहा है। इसी कारण श्रावक प्रारम्भिक अवस्था में रात्रिभोजन का त्याग कर देते हैं, फिर भी उन्हें आलोकितपान भोजन का विधान है अर्थात् अभी तक उसने रात्रिभोजन का त्याग ही किया था, परन्तु अब वह रात्रिभोजन की अनुमोदना भी नहीं करेगा। अब वह पूर्ण रूप से आलोकित पान का पालन करेगा। इसी प्रकार वचनगुप्ति, मनोगुप्ति, आदान निक्षेपण समिति, ईर्यासमिति का पालन भी कृत, कारित, अनुमोदना से करता है।

जैनदर्शन में अहिंसा का जितना सूक्ष्म विवेचन किया गया है उतना वर्णन भारतीय दण्ड संहिता में अप्राप्य है। फिर भी भारतीय दण्ड संहिता में जैनदर्शन के स्थूल रूप का दर्शन होता है। वचनगुप्ति के दुरुपयोग के लिए भारतीय दण्ड संहिता में गाली देने वाले, अपशब्द कहने वाले, अश्लील गाना गाने वाले पर धारा 294 के तहत 3 माह की सजा का प्रावधान है। जो वचनगुप्ति का आंशिक रूप प्रदर्शित करता है

तथा मन से किसी दूसरे के प्रति अहित सोचने पर और अध्यारोपी को इस बात का पता चलने पर वह उसके अहित विचारने वाले के प्रति केस कर सकता है। परन्तु यह बहुत कम देखने को मिलता है, क्योंकि भारतीय दण्ड संहिता में किसी बात को सत्यापित करने के लिए साक्ष्य की आवश्यकता पड़ती है, जो मन में विचारने पर साक्ष्य को सत्यापित नहीं किया जा सकता। ईर्यासमिति, आलोकितपान भोजन और आदान निक्षेपण समिति के लिए भारतीय दण्ड संहिता में कोई प्रकट नियम नहीं है, क्योंकि ये जैनदर्शन के सूक्ष्म सिद्धान्त पर आधारित है।

अहिंसाणुव्रत के अतिचार

सावधानी पूर्वक व्रतों का पालन करते रहने पर भी गृहस्थ श्रावक को प्रमाद या अज्ञान के कारण दोष लगने की संभावना रहती है। कुछ ऐसी भूलें हो जाती हैं, जो व्रतों को मलिन कर देती हैं। ऐसे दोषों को या भूलों को अतिचार कहा है। श्रावक के लिए अहिंसा व्रत के पाँच अतिचार कहे हैं-आचार्य उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र में कहा है कि - **बंध वधच्छेदाति-भारारोपणान्नपान निरोधाः** अर्थात् बंध, वध, छेद, अतिभारारोपण और अन्नपाननिरोध ये अहिंसा व्रत के अतिचार हैं[13] तथा इनको बार-बार करने पर अनाचार हो जाता है। जिसका महान् दोष होता है। ये अतिचार सभी प्राणियों के प्रति हैं, चाहे वह पशु के प्रति व्यवहार करें अथवा मनुष्य के प्रति व्यवहार करें। अहिंसाणुव्रती को इसका अतिचार लगेगा।

बंध - किसी त्रस प्राणी को कष्टदायी बंधन में बाँधना, उसे अपने इष्ट स्थान पर जाने से रोकना या अपने आधीन पशु अथवा मनुष्य को बंधन में रखना बंध है।

वध - किसी प्राणी को लाठी, डण्डा, कोड़ा इत्यादि से प्रताड़ित करना वध है। यहाँ वध का अर्थ हत्या नहीं लेना है क्योंकि उनकी हत्या करना अनाचार है। वह अहिंसा व्रत का अतिचार नहीं है वह साक्षात् हिंसा है। अनैतिक ढंग से शोषण करना, उससे लाभ उठाना आदि वध है।

छेद – अपने आधीन पशुओं और मनुष्यों के क्रोध से या मनोरंजन के लिए हाथ, पैर, कान, नाक आदि अंग छेदना तथा आजीविका आदि का सम्पूर्ण रूप से छेद करना तथा उचित पारिश्रमिक से कम देना आदि भी अंग छेद के समान दोष युक्त हैं।

अतिभारारोपण – बैल, ऊँट, घोड़ा आदि पशुओं से या अनुचर एवं कर्मचारियों से शक्ति से अधिक काम लेना, समयातिरेक करके काम लेना, छोटी उम्र में अधिक काम लेना, अतिभारारोपण है।

अन्नपान निरोध – अन्नपान बंद कर देना, काम करने पर थोड़ा-सा भोजन देना अथवा स्वयं अच्छा भोजन करना और उन्हें घटिया किस्म का भोजन देना, जिससे उनका स्वास्थ्य खराब हो जाए। नौकर को समय पर वेतन न देना आदि अन्नपान निरोध है।[14]

इन पाँचों अतिचारों को मन से, वचन से तथा काय से करना, कृत, कारित, अनुमोदना से करने पर अतिचार लगता है।

भारतीय दण्ड संहिता में इन पाँचों अतिचारों को दण्ड की कोटि में रखा गया है। परन्तु पशुओं के प्रति कुछ नियमों को लागू किया गया है। मनुष्यों के समान इन अतिचारों के लिए कुछ पशुओं को छोड़कर अत्याचार करने वालों को दण्ड नहीं दिया जाता। भारतीय दण्ड संहिता में धारा 342 के तहत यदि कोई व्यक्ति मनुष्यों को बिना कारण आपराधिक दृष्टि से बंदी बनाता है तो 1 साल अथवा 1000 रुपये जुर्माने की सजा का प्रावधान है तथा लाठी, कोड़ा आदि से सामान्य रूप से पिटाई करने पर धारा 323 के तहत 1 या 3 साल तक कारावास अथवा 1000 रुपये तक जुर्माने की सजा का प्रावधान है तथा गंभीर चोट कारित करने पर धारा 325 के अनुसार 7 साल कारावास और जुर्माने की सजा तथा धन के दण्ड का प्रावधान है। इस प्रक्रिया में घायल व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तो धारा 302 के अनुसार उम्र कैद की सजा भी दी जा सकती

है। केन्द्र सरकार ने आपराधिक दृष्टि से मनुष्यों का व्यापार करने वालों को दण्ड स्वरूप धारा 370 के अनुसार 7 साल और जुर्माना और धारा 372, 373 के अनुसार 10 साल और जुर्माने की सजा दी है तथा अपने आधीन काम करने वाले लोगों का देह शोषण करना अथवा चिकित्सकों द्वारा अंग व्यापार करना अंग प्रत्यारोपण करना अपराध की श्रेणी में आता है। उसके मन के विपरीत हाथ-पैर काटकर अथवा फेफड़ों को निकालकर बेचना छेद के अन्तर्गत आता है तथा अंगों को चोरी करके बेचना चोरी के अन्तर्गत भी आता है।

अतिभारारोपण के विषय के अंतर्गत कानून में 14 वर्ष से कम उम्र के बालकों को काम में लगाने पर श्रम विधि के अन्तर्गत व बाल अतिचार अधिनियम के अन्तर्गत दिए गए प्रावधानों के अनुसार सजा होती है एवं जुर्माना होता है तथा शारीरिक रूप से कमजोर महिलाओं से उनकी शक्ति से अतिरिक्त काम करवाने पर घरेलू हिंसा एवं महिला संरक्षण नियम 2005 के अध्याय 3 अधिनियम के अन्तर्गत दिए गए प्रावधानों के अनुसार अलग-अलग सजा होती है एवं जुर्माना होता है तथा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 498 क के तहत महिला पर की जा रही क्रूरता के लिए क्रूरता करने वाले को 3 वर्ष का कारावास एवं जुर्माना दोनों भोगने पड़ते हैं तथा पशुओं के अत्याचार के लिए पशु क्रूरता अधिनियम के तहत अत्याचार के प्रकारों के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार की सजा का प्रावधान है तथा अपने आधीन मजदूरों अथवा अन्य लोगों का अन्नपानी रोकने पर, वेतन रोकने पर, रोकने वाले को श्रम विधि के अन्तर्गत अन्नपानी रोकने की अधिकता तथा निम्नता तथा अपराध की श्रेणी के अनुसार सजा का प्रावधान है तथा माता-पिता का अन्नपान निरोध करने पर या भरण-पोषण न करने पर दण्ड प्रक्रिया संहिता के अनुसार धारा 125 में वर्णित अपने अधीनस्थ माता पिता का मजिस्ट्रेट के द्वारा निर्धारित रकम देनी पड़ती है और वह यह रकम नहीं दे पाता तो उस पुत्र को एक मास की सजा का प्रावधान है।

इस प्रकार जैनधर्म में सूक्ष्म रूप से इनका विवेचन किया है परन्तु भारतीय दण्ड संहिता में इसका विवेचन तथा प्रावधान स्थूल रूप से किया है, क्योंकि सूक्ष्म रूप से दण्ड का प्रावधान करने की शक्ति हम मनुष्यों की बुद्धि के परे है।

❑❑❑

सत्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता

सत्यव्रत जैनधर्म का मौलिक तत्त्व है। अहिंसा की आराधना के लिए सत्य की उपासना अनिवार्य है। झूठा व्यक्ति सही अर्थों में अहिंसक आचरण कर ही नहीं सकता तथा सच्चा अहिंसक कभी असत्य आचरण नहीं कर सकता। असत्य हिंसा का जनक है। अतः जैन मुनि कभी भी असत्य वचनों का प्रयोग नहीं करते। हमेशा हित, मित और प्रिय वचनों का ही प्रयोग करते हैं। कषायों से प्रेरित होकर, जानबूझकर अथवा अज्ञानवश प्रयोग किये जाने वाले कठोर वचन दोषयुक्त होने के कारण त्याज्य हैं। इसी प्रकार वे संदिग्ध अथवा अनिश्चय की दशा में निश्चित वाणी का प्रयोग भी नहीं करते, पूर्ण रूप से निश्चित हो जाने पर निश्चित वाणी बोलते हैं। वे सत्य, मृदु और निर्दोष भाषा में ही बोलते हैं तथा सत्य होने पर भी कभी भी अवज्ञा-सूचक वचनों का प्रयोग नहीं करते, वरन् सम्मान सूचक शब्दों का ही प्रयोग करते हैं। संक्षेप में कहें तो जैन साधु, विचार व विवेकपूर्वक संयमित और संतुलित भाषा का ही प्रयोग करते हैं। इसी कारण भारतीय कानून में जैन साधु को अपराध की कोटि से मुक्त किया गया है, उनके लिए किसी भी प्रकार का कानून नहीं है। कानून तो स्थूल झूठ का त्याग करने वाले सत्याणुव्रती और अव्रती के लिए है, क्योंकि श्रावक मुनि के समान सूक्ष्म झूठ का त्याग नहीं कर सकता। इसलिए उसे स्थूल झूठ का ही त्याग कराया जाता है। जिस झूठ से समाज में प्रतिष्ठा न रहे, प्रामाणिकता खण्डित होती हो, लोगों में अविश्वास उत्पन्न होता हो तथा राजदण्ड का भागी बनना पड़े, इस प्रकार के झूठ को स्थूल झूठ कहते हैं। सत्याणुव्रती श्रावक इस प्रकार के स्थूल झूठ का मन, वचन, काय से सर्वथा त्याग करता है, साथ ही वह कभी ऐसा सत्य भी नहीं बोलता, जिससे किसी पर आपत्ति आती हो। वह अपनी अहिंसक

भावना की सुरक्षा के लिए हित, मित और प्रिय वचनों का ही प्रयोग करता है। आचार्य उमास्वामीजी ने सत्य की परिभाषा में कहा है कि **असदभिधानं अनृतम्** अर्थात् असत् कहना झूठ है।[15] असत् के तीन अर्थ लिए जा सकते हैं, पहला अर्थ जो बात नहीं है वह कहना, दूसरा अर्थ जैसी बात कही गई है वैसी न कहना, तीसरा अर्थ बुराई या दुर्भावना को लेकर किसी से कहना। इसे झूठ कहा गया है।

असत्य से बचाव के कारण

असत्य बोलने से मानव का सर्वतोमुखी पतन होता है। आचार्यों ने कहा है कि मानव जिन कारणों से झूठ बोलता है, जिससे उसके व्रत में अतिचार लगता है उन अतिचारों से बचने के लिए भावनाओं का निर्देश किया गया है, आचार्य उमास्वामी ने तत्त्वार्थसूत्र में असत्य से बचने के लिए पाँच भावनाओं का विवेचन करते हुए कहा है कि–**क्रोधलोभभीरुत्व हास्य प्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पञ्च** अर्थात् क्रोध, लोभ, भय, हास्य का त्याग तथा शास्त्रानुसार वचन का प्रयोग करना, ये पाँच भावनाएँ हैं।[16] जिससे मानव असत्य से बचता है। क्रोध, लोभ, भय, हास्य के वशीभूत होकर हमेशा असत्य का सहारा लेता है। क्रोध में वह यह जान नहीं पाता कि उसके मुख से सत्य वचन निकल रहे हैं या असत्य वचन तथा वह वचन किसी के हित में निकल रहे हैं या अहित में निकल रहे हैं।

भारतीय दण्ड संहिता में क्रोध में बोला गया असत्य, लोभ में बोला गया असत्य, हास्य में बोला गया असत्य तथा अनर्गल वार्तालाप में अपमानित करने के आशय से असत्य भाषण किया गया है तो उसके लिए धारा 500 के तहत् दो वर्ष कारावास या जुर्माने की सजा तथा यदि अन्य को कपट करने के आशय से असत्य भाषण किया गया तो धारा 417 के अनुसार 1 वर्ष का कारावास या जुर्माना तथा 419 के अन्तर्गत 3 वर्ष का कारावास या जुर्माने की सजा का प्रावधान किया गया है। परन्तु भय में बोले गये असत्य के लिए दण्ड का प्रावधान नहीं है।

सत्याणुव्रत के अतिचार

सत्याणुव्रती पूर्ण सावधानी से अपने व्रतों का पालन करता है परन्तु जब वह समाज में व्यवहार करता है तो उसके व्रतों में अतिचार लगने की संभावना अधिक हो जाती है। आचार्य उमास्वामीजी ने तत्त्वार्थसूत्र ग्रन्थ में सत्य व्रत के अतिचारों को पाँच प्रकार का कहा है-**मिथ्योपदेश-रहोभ्याख्यान कूटलेख क्रिया न्यासापहार साकारमंत्रभेदाः** अर्थात् मिथ्योपदेश, स्त्री-पुरुष की गुप्त वार्ता को प्रकट करना कूटलेखक्रिया है, परसम्पत्ति को हड़प जाना, किसी के आशय को न समझकर संकेत द्वारा बात को उजागर करना, ये पाँच प्रकार के अतिचार जैनदर्शन में व्रती के लिए निषेध किए गए हैं।[17]

मिथ्योपदेश

सच्चा झूठा समझाकर किसी को कुमार्ग पर लगाना। असत्य का उपदेश देना, नाप-तौल में किस प्रकार का छल-कपट किया जाता है, किस तरह चालाकी और बेईमानी करके व्यापार किया जा सकता है आदि मिथ्या कार्यों के प्रति प्रेरणा देना मिथ्योपदेश है। मिथ्योपदेश के अन्तर्गत हत्या करने के लिए किसी को सलाह देना, राज्य के विरुद्ध लोगों को उपदेश देना आदि कार्यों के उपदेश को मिथ्योपदेश में लेना चाहिए।

भारतीय दण्ड संहिता में मिथ्या गवाही देना, मिथ्योपदेश में गिना जाता है। मिथ्या साक्ष्य देने वाले को धारा 191 के अनुसार सात वर्ष कारावास तथा जुर्माने से दण्डित किया जाता है। मिथ्या सूचना देने पर धारा 177 के अन्तर्गत 6 माह से 2 वर्ष तक सजा होती है तथा जुर्माने के रूप में 1000 रुपये देना पड़ते हैं। यदि अपराध के कारित होने के सम्बन्ध में मिथ्या सूचना दी गई हो तो धारा 203 के अन्तर्गत दो वर्ष या जुर्माने से दण्डनीय होगा। किसी सच्चे व्यक्ति को अपराध में लगाने के लिए सलाह देने पर धारा 110 से 120 के तहत भिन्न-भिन्न सजा का प्रावधान है। परन्तु दुष्प्रेरण षड्यन्त्र द्वारा किया जाता है तो धारा 120 (ख) के तहत 2 वर्ष का कारावास

तथा जुर्माना होता है तथा अपराध घटित हो जाने पर अपराध के अनुसार सजा दी जाती है।

रहोभ्याख्यान

किसी की गुप्त बात को किसी के सामने प्रकट कर देना। जैसे कोई व्यक्ति एकान्त शान्त स्थान में किसी से रहस्य की बात कर रहा हो अथवा स्त्री पुरुष बात कर रहे हों तो उन्हें बदनाम करने के लिए अपवाह फैला देने को रहस्य आख्यान कहते हैं। इसमें राजकीय गोपनीय बातों का भी ग्रहण किया जा सकता है। जिसका रहस्य खुल जाने से राष्ट्र को हानि होने की आशंका होती है या राष्ट्र में हिंसा का माहौल फैल सकता है या अपातकालीन स्थिति आ सकती है या शत्रु पक्ष से हानि हो सकती है।

भारतीय दण्ड संहिता में इन बातों के लिए दण्ड का विधान किया गया है। यदि कोई व्यक्ति किसी की गोपनीय बातों को उजागर करता है परन्तु अपमानित करने के आशय से नहीं है तो कोई सजा नहीं होती, परन्तु किसी को बदनाम करने के उद्देश्य से अपवाह फैलाने पर धारा 500 के तहत दो वर्ष का कारावास अथवा जुर्माने की सजा मिलती है। राष्ट्र को हानि करने वाली बात को उजागर करने पर धारा 124 (क) के तहत आजीवन कारावास अथवा 3 साल कारावास की सजा तथा जुर्माने की सजा का पात्र है।

कूटलेख क्रिया

कितने ही श्रावकों की यह भ्रान्त धारणा होती है कि मैंने स्थूल असत्य बोलने का परित्याग किया है, किन्तु असत्य लिखने का नहीं। इसी कारण हाथ से मिथ्या लेख देना, जाली हुण्डी, बिल्टी, नोट, सिक्के, मुहर आदि बनाना इसी तरह बहीखातों में झूठा जमा-खर्च करना, आदि कार्य करने में संकोच का अनुभव नहीं करते हैं। भले ही मुँह से झूठ न बोला गया हो, पर लेखन में तो भयंकर झूठ है। इस प्रकार के सभी मिथ्या लेख कूटलेखक्रिया के अन्तर्गत आते हैं।

जैनदर्शन में कूटलेख के लिए जिन कारणों का उल्लेख प्राप्त होता है, उन्हीं कारणों का भारतीय दण्ड संहिता में भी उल्लेख प्राप्त होता है। मिथ्या लेख, जाली हुण्डी, बही खातों का फर्जी होना आदि कारण कहें हैं, उनमें यदि कोई व्यक्ति अपराधी माना जाता है तो उसे धारा 465 के तहत 2 वर्ष का कारावास अथवा जुर्माने की सजा दी जाती है तथा राज्यकीय सिक्के के जाली होने सम्बन्धी सामग्री प्राप्त होने पर, बेचने पर, उपयोग में लाने हेतु एकत्र करने पर धारा 232, 233, 234, 235 के तहत 3 वर्ष से लेकर 10 वर्ष तक के कारावास का भागीदार होगा तथा मुहर, नोट, सरकारी स्टाम्प पेपर आदि के जाली होने पर धारा 255 के तहत बनाने वाले को 10 वर्ष कारावास की सजा तथा बेचने वाले को धारा 257 के तहत 7 वर्ष के कारावास की सजा मिलती है। बही खातों के जाली होने पर धारा 477 (अ) के तहत 7 वर्ष का कारावास अथवा जुर्माने की सजा का हकदार है।

न्यासापहार

चतुर्थ स्थूल सत्य के अतिचारों में दूसरे की धरोहर का हरण करने के लिए प्रयुक्त असत्य को न्यासापहार कहा है। लोभ के कारण किसी की रखी हुई अमानत को हड़पने के आशय से कम-ज्यादा बताना या सर्वथा इंकार कर देना। न्यासापहार है, यद्यपि आचार्य मनु ने भी कहा है-

यो निक्षेपं नार्पयति यश्चानिक्षिप्य याचते।

तावुभौ चोरवच्छास्यौ दाप्यौ वा तत्समं दमम्।।[18]

अर्थात् धरोहर को न लौटाने को तस्कर कृत्य माना है और कहा है कि उसे तस्कर की तरह दण्डित करना चाहिए। पर यहाँ न्यासापहार को असत्य में गिना गया है, क्योंकि यह कुकृत्य असत्य बोलकर किया जाता है। यह भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से बोला जाता है। बढ़िया धरोहर को घटिया कहना तथा नये को पुरानी और पुरानी को नई कहना भी इसी के अन्तर्गत आता है।

भारतीय दण्ड संहिता में सम्पत्ति के अपहरण किये जाने पर या जबरन छीन लेने पर अपहरण करने वाले अथवा अवैध रूप से कब्जा करने वाले पर धारा 208 के तहत दो वर्ष की सजा तथा जुर्माना भी हो सकता है। अथवा पर सम्पत्ति को हड़पने के इरादे से बेईमानी से न्यायालय में मिथ्या दावा करने पर धारा 209 के तहत दो साल की सजा का प्रावधान किया गया है।

साकार मंत्र भेद

पति-पत्नि की अथवा कन्या की या युवक की गुप्त बातों को अपमान करने के उद्देश्य से अन्य लोगों के सामने संकेत पूर्वक प्रकट करना जिससे उसकी बदनामी हो जाये। इसमें जिस प्रकार पुरुष की गुप्त बातों का निषेध पुरुष अथवा स्त्री दोनों के लिए किया है तथा स्त्री की गुप्त बातों को प्रकट करने का निषेध पुरुष अथवा स्त्री दोनों के लिए है।

भारतीय दण्ड संहिता में एक दूसरे के प्रति आक्षेप लगाकर गुप्त बातों को चाहे वह संकेत पूर्वक हो या साक्षात् वचन द्वारा हो प्रकट करने पर यदि किसी की बदनामी होती है तो वह गुप्त बात को प्रकट करने वाला आरोपी धारा 500 के तहत दो वर्ष का कारावास तथा जुर्माने की सजा का पात्र है।

❑❑❑

अचौर्याणुव्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता

आचार्य उमास्वामी महाराज ने चोरी के विषय में कहा है कि **अदत्तादानं स्तेयम्**[19] अर्थात् बिना दिए हुए किसी भी वस्तु को ग्रहण करना चोरी कहलाती है। इसका त्याग करना अचौर्य व्रत है। श्रमण का तृतीय व्रत अदत्तादान विरमण है। श्रमण के लिए बिना अनुमति के दन्तशोधनार्थ तृण आदि ग्रहण करना भी वर्ज्य माना गया है, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह संभव नहीं कि सम्पूर्ण प्रकार की चोरी का मन, वचन, काय से त्याग कर दे।

गृहस्थ श्रावक स्थूल अदत्तादान का त्याग करता है। वह यह प्रतिज्ञा ग्रहण करता है कि चाहे सचित्त वस्तु हो, चाहे अचित्त वस्तु हो, वह दुष्ट अध्यवसाय पूर्वक अपने अधिकार से बाहर की अथवा दूसरे के अधिकार की वस्तु को, उस वस्तु के अधिकारी की आज्ञा के बिना ग्रहण नहीं करेगा, क्योंकि ऐसा करना स्थूल अदत्तादान या चोरी है। जिसके करने से समाज में व्यक्ति चोर, बेईमान या तस्कर कहलाता है, जिस वस्तु पर उसका स्वयं का अधिकार नहीं है, उस वस्तु को लेकर उसका उपभोग करना स्थूल चोरी है।

अचौर्याणुव्रती उक्त प्रकार की समस्त चोरियों, जिसके करने से राजदण्ड भोगना पड़ता है, समाज में अविश्वास बढ़ता है तथा प्रामाणिकता खण्डित होती है। प्रतिष्ठा को धक्का लगता है। किसी को ठगना, किसी की जेब काटना, किसी की सम्पत्ति हड़प लेना, किसी का गड़ा धन निकाल लेना, असली वस्तु में नकली वस्तु मिलाकर बेचना आदि सब स्थूल चोरी के उदाहरण हैं। इन सबका त्याग करता है, इससे उसका चारित्रिक बल बढ़ जाता है और किसी भी सांसारिक कार्य में उसे बाधा उपस्थित नहीं होती।

अचौर्याणुव्रत की भावनाएँ

चोरी का प्रथम कारण भोगों के प्रति आसक्ति है, जब मानव के मन में भोग लालसा, वैभव लिप्सा आदि हीन प्रवृत्तियाँ पनपती हैं तो वह स्तेय की ओर प्रवृत्त होता है।

चोरी से बचने के लिए आचार्यों ने कुछ निर्देश दिये हैं, जिसके कारण अणुव्रती को चोरी के भाव भी मन में पनप नहीं सकते। आचार्य उमास्वामी महाराज ने चोरी से बचने के लिए अचौर्याणुव्रत की भावनाओं का कथन करते हुए कहा है कि-**शून्यागार विमोचितावासपरोपरोधा-करणभैक्ष्यशुद्धि सधर्माविसंवादः पञ्च**[20] अर्थात् चोरी से बचने के लिए अणुव्रती को कहा है कि वह दूसरे के आगार को अपना न माने, यदि कहीं रुकना पड़े तो शून्य आगार अर्थात् खाली मकान में रुके परन्तु किसी दूसरे के आने पर उसे इंकार नहीं करे। यदि इंकार करता है तो उसने उस खाली मकान में स्वामित्व कर लिया है जो अणुव्रती को शोभनीय नहीं है। इसलिए अणुव्रती को खाली मकान में रहने की अनुमति तो दे दी पर स्वामित्व नहीं दिया। जिससे उसे पराई सम्पत्ति की चोरी का पाप नहीं लगता। इसके बाद विमोचितावास में ऐसे स्थान में रह सकता है। जो किसी के द्वारा छोड़ा गया है परन्तु स्वामित्व से रहित होना चाहिए तथा परोपरोधाकरण में स्वामित्व से रहित स्वयं ठहरे और दूसरे को ठहरने के लिए स्थान दे। भैक्ष्य शुद्धि के लिए आचार्यों ने कहा है कि मानव की तीन आवश्यकताएँ हैं, रोटी, कपड़ा और मकान जिसके लिए मानव परिश्रम करता है। अणुव्रती मकान तथा कपड़े की सीमा तो कर लेता है परन्तु भोजन की सीमा नहीं करता उसे भरपेट भोजन चाहिए। इसके लिए अन्याय का सहारा ले सकता है। चोरी इत्यादि कर अच्छे से अच्छा भोजन कर सकता है। इन कारणों को रोकने के लिए आचार्यों ने अचौर्य की भावना में भैक्ष्यशुद्धि भावना को रखा है, क्योंकि श्रावक यदि शुद्ध भोजन करेगा तो उसका विचार भी शुद्ध होगा। जिससे पाप करने का विचार नहीं

आयेगा तथा शुद्ध भोजन के लिए अधिक धन की आवश्यकता नहीं पड़ती। जिससे श्रावक चोरी का भाव ही नहीं करेगा। इससे भी अधिक सूक्ष्मता के लिए सधर्माविसंवाद को अचौर्य की भावना में रखा है, साधर्मी को नीचा दिखाने के लिए साक्ष्यों की चोरी भी कर सकता है तथा कुछ साक्ष्यों को चुराकर अपने नाम भी कर सकता है। इन भावनाओं को सूक्ष्मता की दृष्टि से जैनदर्शन में स्थान दिया गया है।

भारतीय दण्ड संहिता में ऐसा सूक्ष्मता से वर्णन प्राप्त नहीं होता परन्तु यदि कोई व्यक्ति सूने पर्वतों, सूने वृक्षों की कोटर में, कंदराओं में, वन में तथा सूने छोड़े गये मकानों में रहता है तो उसे चोरी का दोषी नहीं समझा जाता है तथा वह कुछ समय वहाँ रहकर अपना स्वामित्व भी स्थापित कर सकता है परन्तु जैनदर्शन में इसे चोरी कहा गया है, इनके प्रति यदि वह मन में भी विचार करता है तो चोरी का आंशिक भागीदार है।

अचौर्याणुव्रत के अतिचार

आचार्य अकलंक देव ने अचौर्य व्रत में लगने वाले अतिचारों का वर्णन करते हुए राजवार्तिक में कहा है कि – **स्तेनप्रयोग तदाहृतादान विरुद्ध राज्यातिक्रम हीनाधिक मानोन्मान प्रतिरूपक व्यवहाराः**[21] अर्थात् अणुव्रती को चोरी के प्रयोग बताने का त्याग, चुराये हुए धन को खरीदने का त्याग, राज्य के विरोध में धन हरण करने का त्याग, कम, बढ़ तौलने का त्याग, मिलावट करने का त्याग, नहीं करना।

स्तेनप्रयोग

तस्करों को चोरी करने की प्रेरणा और प्रोत्साहन देना, उस कार्य की प्रशंसा करके उस कार्य को उत्तेजना देना, स्तेन प्रयोग है। इसमें चोरी के साधनों को उपलब्ध कराना, अपहरण के तरीके का ज्ञान करना, चोरी करने वाले नियमों के विषय में पुस्तकें लिखना अथवा बेचना, व्यक्ति के अपहरण के लिए अपना वाहन किराये पर देना अथवा चोरी के तरीकों के लिए सी.डी. आदि बेचना ये स्तेनप्रयोग हैं।

भारतीय दण्ड संहिता में चोरी करने वाले के समान चोरी करने में सहायता देने वाला, चोरी के साधन उपलब्ध कराने वाला भी दोषी है। इसके लिए चोरी करने वाला आरोपी धारा 379, 380, 381 के तहत 3 से 7 साल तथा जुर्माने की सजा का दोषी है तथा लूट का आशय होने पर धारा 392 के तहत दस वर्ष की तथा लूट राजमार्ग में सूर्यास्त और सूर्योदय के बीच की जाए तो चौदह वर्ष की सजा का पात्र है। चोरी में सहायता करने वाला धारा 414 के तहत 3 वर्ष की सजा एवं जुर्माने का पात्र है। मानव अपहरण के सम्बन्ध में आरोपी यदि किसी व्यक्ति को किसी स्थान से ले जाने के लिए बल द्वारा विवश करता है तो वह अपहरण का दोषी है जिससे उसे धारा 363 के तहत सात साल के कारावास की सजा तथा जुर्माना देय होगा तथा भीख मंगाने के उद्देश्य से अप्राप्यवय का अपहरण करने पर धारा 363 (क) के तहत दस वर्ष के कारावास की सजा व जुर्माना होता है परन्तु विकलांगीकरण करके भीख मंगाने के प्रयोजनों से अपहरण करने पर आजीवन कारावास की सजा व जुर्माने का प्रावधान है तथा अपहृत की हत्या हो जाने पर आजीवन कारावास की सजा का प्रावधान रखा गया है तथा अपहरण में प्रयुक्त वाहन के स्वामी को ज्ञात होने पर अपराध में संलिप्त होने पर अपहरण का दोषी माना जाता है, चोरी के तरीकों के लिए पुस्तकों को लिखने वाला, सी.डी. बनाने वाला, बिना अनुमति कापी करने वाले के लिए पृथक् -पृथक् अधिनियमों का प्रावधान है। जिसमें पृथक् सजा दी जाती है।

तदाहृदादान

जानकारी के अभाव में या यह समझकर कि चोरी करने व कराने में पाप है, पर चोर के द्वारा लाई गई चोरी की वस्तु खरीदने या घर में रखने में क्या हर्ज है। यह विचारकर श्रावक चोरी की वस्तु खरीद लेता है पर यह स्मरण रखना चाहिए कि वह अतिचार है।

कितने ही व्यक्तियों की यह भ्रान्त धारणा है कि हम मुफ्त में तो कोई वस्तु ले नहीं रहे हैं, दाम देकर वस्तु को खरीद रहे हैं। उसमें चोरी जैसी क्या बात है? पर उन्हें यह स्मरण रखना होगा कि जो वस्तु चोरी से लाई जाती है, वह वस्तु सस्ती बेची जाती है। इसलिए श्रावक को विवेक पूर्वक जाँच करके ही कोई वस्तु लेनी चाहिए। चोरी की वस्तु खरीदने वाला व्यक्ति भी चोर के समान ही दण्डनीय होता है। चुराई हुई वस्तु को अपने घर में रखना, चोर, डाकू आदि को अपने घर में आश्रय देना, यह भी अपराध है। श्रावक इस प्रकार के अतिचार से बचता है।

भारतीय दण्ड संहिता में चोरी करने वाले के साथ चोरी की वस्तु को खरीदने वाला भी चोरी पाप से दूषित समझा जाता है। जिसके लिए धारा 411, 412, 413 के तहत 3 वर्ष से 10 वर्ष तक अथवा आजीवन कारावास तथा जुर्माने की सजा निर्धारित है, परन्तु खरीदने वाला व्यक्ति अज्ञान अवस्था में समान खरीद रहा है तो न्यायालय से उसे सजा में कुछ राहत बरती जा सकती है परन्तु ज्ञात भाव से वह माल खरीदता है तो बराबर का दोषी है तथा चोरी की वस्तु को अपने घर पर रखने पर या यह जानते हुए कि कोई व्यक्ति लूट या डकैती हाल में ही करने वाला है या हाल ही में लूट या डकैती कर चुके हैं, उन चोर, डाकू को आश्रय देने पर धारा 216 के तहत आश्रय देने वाला भी अपराधी है, जिसको सात साल की सजा एवं जुर्माने का प्रावधान है।

विरुद्धराज्यातिक्रम

जो राज्य एक-दूसरे के विरोधी हैं, ऐसे राज्य का उल्लंघन करना यानी राज्य की सीमा का अतिक्रमण करना। इसका एक अर्थ यह है कि विरोधी राज्य की सीमा का उल्लंघन करके वहाँ के लोगों को माल देना और वहाँ से माल लाना, शासन विरुद्ध कार्य करना, जिससे शासन में अव्यवस्था फैलती है। इस अतिचार में अवैधानिक व्यापार, निषिद्ध वस्तु एक स्थल से दूसरे स्थल पर पहुँचाना, राज्य के विरुद्ध गुप्त कार्य करना

आदि सभी सम्मिलित हैं। राज्य या देश के विरोध में धन हानि पहुँचाने के उद्देश्य से टेक्स चोरी करना, बिजली चोरी करना, सरकाराधीन वस्तुओं को चुराना आदि भी विरुद्ध राज्यातिक्रम में आते हैं।

जैनदर्शन के इस सिद्धान्त का पालन भारतीय दण्ड संहिता भी करता है। शत्रु पक्ष के किसी व्यक्ति के द्वारा बिना अनुमति के देश में या राज्य में प्रवेश करना, विरुद्ध व्यापार करना, राज्य में रहते हुए राज्य शासन के विरुद्ध कार्य करना अर्थात् बिजली की चोरी करना, टैक्स की चोरी करना, बिना लाइसेंस के लाइसेंस सुदा दुकान चलाना, गैरकानूनी विद्यालय, महाविद्यालय का संचालन करना तथा राज्य के विरुद्ध अवैधानिक रूप से व्यापार जैसे-चरस, गांजा, अफीम, शराब आदि का व्यापार करने पर पृथक् अधिनियम लागू है। राज्य के विरुद्ध या संविधान के विरुद्ध राष्ट्रीय अखण्डता पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले लाँछन लगाना अथवा उपदेश देना, जिसमें ऐसा लाँछन लगाना अथवा प्रकाशित करना जो कि किसी वर्ग के व्यक्ति के विषय में लाँछन लगाना क्योंकि वह किसी धार्मिक, मूलवंशीय, भाषाई या प्रादेशिक समूह या जाति के सदस्य हैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा नहीं रख सकते या भारत की संप्रभुता और अखण्डता की मर्यादा नहीं बनाए रख सकते या व्याख्यान करेगा, परामर्श देगा, प्रचार करेगा या प्रकाशित करेगा कि ऐसे व्यक्ति को भारत के नागरिक के रूप में अधिकार न दिए जाए या उन्हें इनसे वंचित किया जाए। इस प्रकार से संप्रभुता के विरुद्ध कार्य करने या भाषण देने पर धारा 153(ख) के अन्तर्गत 3 वर्ष का कारावास या जुर्माना अथवा दोनों हो सकते हैं तथा 171(ख) के तहत रिश्वत लेने पर 1 वर्ष के कारावास की सजा प्राप्त होती है।

हीनाधिक मानोन्मान

सरकार ने नापतौल के जो पैमाने मीटर, किलोग्राम, लीटर आदि

निश्चित किए हैं, उससे कम ज्यादा तौलना और मापना। यह एक प्रकार से बेईमानी और विश्वासघात है। किसी के अज्ञान का अनुचित लाभ उठाना है। यदि व्यापारी बाँट सही रखकर भी तौलते समय डण्डी मारता है या नापते समय हाथ को आगे पीछे करता है तो यह भी चोरी है। श्रावक को इस अतिचार से भी बचना चाहिए।

भारतीय दण्ड संहिता में भी हीनाधिक मानोन्मान को कपटपूर्ण व्यापार के रूप में गिना गया है। इसके अन्तर्गत तौलने के लिए खोटे उपकरणों का कपटपूर्ण उपयोग ज्ञात भाव से करने पर तथा नाप तौल पर कपट करने पर और उनके साधनों को रखने तथा बेचने पर धारा 264, 265, 266, 267 के तहत एक वर्ष के कारावास या जुर्माना अथवा दोनों का प्रावधान है तथा जो कोई व्यक्ति कपट पूर्वक या बेईमानी से किसी सिक्के का वजन कम करता है या उसमें दूसरी सस्ती धातु मिलाकर चलाता है, वह धारा 246, 247 के तहत तीन वर्ष के कारावास से तथा जुर्माने से दण्डनीय है।

प्रतिरूपक व्यवहार

किसी श्रेष्ठ वस्तु में उसी के सदृश नकली वस्तु मिलाकर देना। जैसे - गेहूँ में कंकर, कालीमिर्च में पपीते के बीज, जीरे में रेत, असली घी में वनस्पति घी या आलू, दूध में पानी, मिर्ची में लाल पाऊडर आदि मिलाना। अच्छी वस्तु बताकर देना प्रतिरूपक व्यवहार अतिचार हैं।

प्रतिरूपक व्यवहार का अर्थ है - प्रतीक रूप में दूसरी वस्तु की मिलावट का व्यापार करना, जिसमें खाद्य तथा पेय आदि प्रत्येक वस्तु को ग्रहण किया गया है, भारतीय दण्ड संहिता कहती है कि द्वेषपूर्ण कार्य में किसी के जीवन को संकट में डालने पर या संक्रमण फैलाने पर धारा 270 के तहत दो वर्ष का कारावास या जुर्माना अथवा दोनों से दण्डित किया जाएगा। इसी प्रकार बेचने के उद्देश्य से खाद्य या पेय पदार्थों का अपमिश्रण करते हैं। इसमें यदि वह जानता है कि यह खाद्य पदार्थ उपभोग

के योग्य नहीं है। फिर भी मिश्रित करके बेचता है या अनुपयुक्त खाद्य या पेय पदार्थ को साक्षात् बेचता है तो धारा 272, 273 के तहत 6 माह कारावास या 1000 रुपये का जुर्माना अथवा दोनों से दण्डित किया जाएगा। इसी प्रकार औषधियों में मिश्रण के लिए अपमिश्रित औषधियाँ बनाने पर धारा 274 तथा अपमिश्रित औषधियाँ बेचने पर धारा 275 के तहत 6 माह कारावास या 1000 रुपये जुर्माना अथवा दोनों हो सकते हैं। नकली स्टाम्प पेपर को असली स्टाम्प पेपर के रूप में चलाने पर धारा 260 के तहत तीन वर्ष का कारावास तथा जुर्माना भोगेगा तथा बेचने या बनाने पर वह धारा 257 के तहत सात साल का कारावास तथा जुर्माने से दण्डनीय होगा तथा जाली नोट या जाली सिक्के चलाने पर वह धारा 249 के अनुसार सात साल के दण्ड से तथा जुर्माने का भागीदार होगा। इस प्रकार अपमिश्रण को प्रतिरूपक व्यवहार में परिगणित किया है।

अचौर्य व्रत के अतिचारों का व्यापार व व्यवहार में कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। आज यदि व्यापारी वर्ग इन अतिचारों का सेवन न करे तो देशवासियों को हर दृष्टि से लाभ हो सकता है और श्रावक की गौरव गरिमा में भी अभिवृद्धि हो सकती है।

❑❑❑

ब्रह्मचर्याणु व्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता

ब्रह्मचर्य मानव जीवन के उत्थान का मेरुदण्ड है। विश्व के सभी मूर्धन्य मनीषियों ने ब्रह्मचर्य की गौरव गरिमा के गीत गाये हैं। ब्रह्मचर्य आत्मा की आन्तरिक शक्ति है। जिस शक्ति के विकसित होने पर विश्व की अन्य शक्तियाँ ब्रह्मचारी के चरणों में नत हो जाती हैं। आचार्य अकलंक देव ने ब्रह्मचर्य की परिभाषा में कहा है – **मैथुनमब्रह्म**[22] अर्थात् मैथुन को अब्रह्म कहा है तथा मैथुन त्याग को ब्रह्मचर्य कहा है।

मोक्षमार्ग की आराधना के लिए ब्रह्मचर्य की साधना आवश्यक मानी गई है। श्रमण पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन करता है, किन्तु गृहस्थाश्रम में रहकर श्रावक के लिए पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना असंभव तो नहीं किन्तु अत्यन्त कठिन अवश्य है। गृहस्थ पराई स्त्री के साथ सहवास का सर्वथा परित्याग करता है और अपनी स्त्री के साथ भी काम सेवन की मर्यादा निश्चित करता है।

गृहस्थाश्रम का लक्ष्य वासना पूर्ति करना नहीं, अपितु ब्रह्मचर्य के उच्च आदर्श को प्राप्त करना है। पत्नी भोग वासना की पूर्ति करने वाली पुतली नहीं, अपितु ब्रह्मचर्य के महान् मार्ग पर बढ़ने में सहायिका है। एतदर्थ ही आगम साहित्य में उसके लिए धम्म सहाय्या, धर्मपत्नी, सहचारिणी प्रभृति विविध विशेषण प्रयुक्त हुए हैं। जिस प्रकार श्रावक के लिए स्वदार संतोष व्रत है, उसी तरह श्राविका के लिए भी स्वपति संतोष व्रत है। यह व्रत सामाजिक दृष्टि से भी अत्यन्त आवश्यक है। वैयक्तिक जीवन विकास के लिए भी आवश्यक है। देशविरति ब्रह्मचर्य का नियम स्वीकार करने पर विवाहित स्त्री पुरुष के सांसारिक कार्यों में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित नहीं होती। नैतिक धार्मिक सभी दृष्टियों से इस व्रत का पालन करना श्रेयस्कर है।

गृहस्थ ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञा इस प्रकार ग्रहण करता है – मैं विधिपूर्वक विवाहित स्वपत्नी के अतिरिक्त शेष सभी स्त्री जाति के साथ मैथुन का परित्याग करता हूँ। यावज्जीवन देव–देवी सम्बन्धी मैथुन का मन, वचन व काय से न सेवन करूँगा, न कराऊँगा, इसी तरह मनुष्य–मनुष्यणी और तिर्यञ्च–तिर्यञ्चणी सम्बन्धी मैथुन सेवन का त्याग करता हूँ।

ब्रह्मचर्याणुव्रत की भावनाएँ

आचार्य उमास्वामीजी ने तत्त्वार्थसूत्र ग्रन्थ में ब्रह्मचर्य को निर्दोष पालने के लिए पाँच भावनाओं का वर्णन किया है कहा है कि **स्त्रीरागकथा-श्रवण तन्मनोहरांगनिरीक्षण पूर्व रतानुस्मरण वृष्येष्टरस स्वशरीर संस्कार त्यागाः पंच** अर्थात् स्त्रीरागकथाश्रवण त्याग, स्त्री मनोहरांग निरीक्षण त्याग, पूर्वरतानुस्मरण त्याग, वृष्येष्टरस त्याग और स्वशरीर संस्कार त्याग ये पाँच ब्रह्मचर्य व्रत की भावनाएँ हैं।[23]

स्त्रियों में आसक्ति बढ़ाने वाली कथाओं को सुनने–सुनाने, पढ़ने–पढ़ाने का त्याग करना स्त्रीरागकथा श्रवण त्याग है। स्त्रियों की ओर विकारी दृष्टि से उनके मनोहर अंगों को नहीं देखना, स्त्री मनोहरांग निरीक्षण त्याग है। पूर्व काल में भोगे हुए भोग विलास का स्मरण नहीं करना पूर्वरतानुस्मरण त्याग है। इन्द्रिय लालसा बढ़ाने वाले कामोद्दीपक पदार्थों का सेवन नहीं करना वृष्येष्टरस त्याग है तथा अपने शरीर के संस्कार का त्याग करना स्वशरीर संस्कार त्याग है। इन भावनाओं से ब्रह्मचर्य व्रत में स्थिरता आती है।

भारतीय दण्ड संहिता में प्रत्यक्ष रूप से इन सभी भावनाओं के लिए किसी प्रकार के अधिनियम का प्रावधान नहीं है, परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से भारतीय दण्ड संहिता भी समाज में महिलाओं की अस्मिता को सुरक्षित करने के लिए जैनदर्शन की इन भावनाओं का समर्थन करती है। यदि कोई व्यक्ति स्त्री के प्रति मोहित होकर या वासना वश अश्लील गाने

गाता है या स्त्री सम्बन्धी राग को बढ़ाने वाली कथाओं का व्याख्यान करता है या पढ़ाता है अथवा अश्लील पुस्तकों, सीडियों आदि को बेचता है या किसी अश्लील पुस्तक, पुस्तिका, कागज, रेखाचित्र, रंगचित्र, रूपण या आकृति या किसी भी अन्य अश्लील वस्तु को चाहे वह कुछ भी हो बेचेगा, भाड़े पर देगा, वितरित करेगा, लोक प्रदर्शित करेगा, या उसको किसी भी प्रकार परिचालित करायेगा उसे विक्रय, भाड़े, वितरण या लोक प्रदर्शन या परिचालन के प्रयोजनों के लिए रचेगा, उत्पादित करेगा या अपने कब्जे में रखेगा वह धारा 292 के तहत दो वर्ष से पाँच वर्ष तक के कारावास तथा दो हजार से पाँच हजार रुपये से दण्डित किया जाएगा तथा बीस वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति को अश्लील वस्तुओं का विक्रय करने पर धारा 293 के अनुसार, धारा 292 के कार्यों को करता है तो तीन साल से सात साल तक के कारावास की सजा तथा दो हजार से पाँच हजार तक रुपये से दण्डित किया जाएगा तथा स्त्री के मनोहर अंगों को देखकर उनके समक्ष अश्लील गाने, पंवाड़े या शब्द गाएगा या सुनाएगा या उच्चारित करेगा जिससे दूसरों को क्षोभ होता हो तो उसे धारा 294 के तहत तीन मास का कारावास तथा जुर्माने से दण्डित होना पड़ेगा। भारतीय दण्ड संहिता में जैनदर्शन में वर्णित पाँच भावनाओं में से दो भावनाओं के लिए स्थूल कानून की धाराओं का प्रावधान है, परन्तु पूर्वरतानुस्मरण, वृष्येष्टरस सेवन तथा स्वशरीर संस्कार करने को अपराध नहीं माना है। जैनदर्शन में इन पाँच भावनाओं का वर्णन आंतरिक विशुद्धि के लिए एवं भविष्य में पाप से बचने के लिए विशेष रूप से किया गया है।

ब्रह्मचर्याणुव्रत के अतिचार

ब्रह्मचर्य व्रत की आराधना के लिए उनके दोषों से बचना अत्यावश्यक है। जिसके लिए आचार्य अकलंक देव ने पाँच अतिचारों का बखान किया है। कहा है-**परविवाहकरणेत्वरिका परिगृहीता परिगृहीतागमनानङ्गक्रीड़ा-कामतीव्राभिनिवेशाः** अर्थात् परविवाह-

करण, परिगृहीत इत्वरिकागमन, अपरिगृहीत इत्वरिकागमन, अनङ्गक्रीड़ा, कामतीव्राभिनिवेश ये पाँच अतिचार कहे हैं।[24]

परविवाहकरण

अपने पुत्र और पुत्रियों का विवाह करना, श्रावक के चतुर्थ व्रत के अंतर्गत है, किन्तु कन्यादान में पुण्य समझकर और रागादि के कारण दूसरों के लिए लड़के-लड़कियाँ ढूँढ़ना, उनका विवाह करना परविवाहकरण नामक अतिचार है। पूर्व काल में जो लोग देश-विदेश में व्यापार करने के लिए जाते थे या नौकरी करते थे। जो स्वामी के कार्य से देश-विदेश में भ्रमण करते थे तथा ऐसा व्यवसाय करने वाले जिनका देश-विदेश में भ्रमण करना अनिवार्य था। जैसे-चित्रकार, जादूगर, रत्न व्यवसायी आदि ये लोग दूसरे लोगों के पुत्र-पुत्रियों का विवाह आदि करने का व्यवहार भी निभाते थे। जैसे चित्रकार भरत ने द्वेषबुद्धि से श्रेणिक राजा के सामने रानी चेलना का चित्र प्रस्तुत करके दोनों के विवाह में मुख्य भूमिका निभायी थी। वर्तमान समय में यह लोक व्यवहार व्यापार का रूप धारण कर चुका है। कुछ लोग वर-वधु के विवाह कराने में कुछ आर्थिक लाभ प्राप्त करके व्यापार करते हैं, जो उनकी प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है। इस प्रकार के व्यापार में कभी धन के लोभ में दलाल गलत वर-वधु का विवाह कराकर उन दोनों का घर बसने से पहले ही समाप्त कर देते हैं। इस कारण दहेज प्रथा आदि कुरीतियों ने भी जन्म धारण कर लिया।

भारतीय कानून में किसी का विवाह कराने को अपराध की श्रेणी में नहीं लिया गया है, परन्तु परविवाह में बाल-विवाह आदि अयुक्त विवाह कराता है तो वह अपराध की श्रेणी में परिगणित किया जाता है। जिसमें बाल-विवाह अधिनियम के अंतर्गत सजा का पात्र है।

परिगृहीता इत्वरिकागमन

कुछ समय के लिए पैसे देकर या किसी तरह से अपने यहाँ पर रखी हुई स्त्री के साथ गमन करना। भ्रान्तिवश व्यक्ति यह समझता है कि मैंने स्वपत्नी की छूट रखी है इसलिए किसी स्त्री को कुछ दिनों के लिए धन या वस्तुएँ देकर अपनी बना लूँ और उसके साथ पत्नी की तरह व्यवहार करूँ। पर वह यह नहीं सोचता कि स्वदार वह स्त्री है जिसका उसके साथ विधिवत् विवाह हुआ है। जो महिला अपनी स्त्री नहीं है, उसे कुछ समय के लिए अपनी मानना और उसके साथ पत्नीवत् व्यवहार करना अतिचार है, क्योंकि जो कुछ समय के लिए अपनाई जाती है, वह धर्मपत्नी नहीं, भोगपत्नी होती है। वह जीवनोत्थान में सहायक नहीं हो सकती। इसीलिए श्रावक उसके साथ सहवास नहीं कर सकता।

भारतीय दण्ड संहिता में परिगृहीता इत्वरिकागमन को धारा 497 में जारकर्म के नाम से जाना जाता है। इसमें जो कोई व्यक्ति यह जानते हुए कि यह स्त्री किसी अन्य की पत्नि है, फिर भी उस स्त्री की मौन स्वीकृति के साथ उसके साथ मैथुन सेवन करता है, वह बलात्कार के अपराध को करता है। वह जारकर्म का दोषी होगा। इस दोष के लिए वह दोनों प्रकार के कारावास में किसी भी प्रकार के कारावास में से एक प्रकार के कारावास का अधिकारी होगा। जिसकी अवधि पाँच वर्ष तक हो सकती है तथा जुर्माने का भी अधिकारी होगा। इस अपराध में स्त्री तथा पुरुष दोनों की सहमति होने के कारण जैनदर्शन के अनुसार दोनों पाप के अधिकारी है और दोनों को समान रूप से पाप लगेगा परन्तु भारतीय दण्ड संहिता में स्त्री को विशेष सुविधा दी गई है। इस कारण उस स्त्री को दुष्प्रेरण के रूप में दण्डनीय नहीं माना गया है तथा धारा 498 के अनुसार विवाहिता स्त्री को आपराधिक आशय से फुसला कर ले जाने या निरूद्ध रखने पर दो वर्ष के दण्ड का प्रावधान है। इसमें जो कोई किसी स्त्री को, जो किसी अन्य पुरुष की पत्नी है, यह जानते हुए फुसलाकर ले जाएगा और उसके साथ अयुक्त संभोग करे या छुपाएगा यह इस प्रकार के दण्ड का अधिकारी है।

अपरिगृहीता इत्वरिकागमन

कितने ही व्यक्तियों में यह भ्रम होता है कि परदारविरमण व्रत का अर्थ दूसरों की विवाहित पत्नी से निवृत्त होना है। पर जो वेश्याएँ, विधवाएँ, परित्यक्ताएँ या कुमारिकाएँ हैं, जो वर्तमान में किसी की भी परिगृहीता नहीं हैं, उनके साथ गमन किया जाये तो व्रत भंग नहीं होता। किन्तु उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि जो भी पर स्त्रियाँ हैं, वे सभी परिगृहीता या अपरिगृहीता हैं। उनके साथ गमन करना अतिचार है। इसका अर्थ यह भी है कि जिस कन्या के साथ सगाई हो चुकी हो, किन्तु विधिवत् विवाह नहीं हुआ हो तो उनके साथ भी गमन करना अतिचार है।

भारतीय दण्ड संहिता में भी जैनदर्शन के समान विधिपूर्वक विवाहित स्त्री ही संभोग के योग्य होती है और संभोग में अपनी पत्नि की सहमति आवश्यक है, यदि पत्नि की या पति की सहमति के बिना मैथुन सेवन किया जाता है तो वह जैनदर्शन तथा कानून दोनों की दृष्टि में अपराध है। इस अपराध में बलात्कार स्वरूप धारा 376 के तहत अपराध सिद्ध होने पर पति अथवा पत्नि को दो वर्ष की सजा होती है तथा विवाह के बिना जो पुरुष किसी कन्या, परित्यक्ता अथवा विधवा के साथ मैथुन सेवन करता है तो वह धारा 493 के तहत दस वर्ष के कारावास का और जुर्माने का अधिकारी है इस धारा में जो पुरुष अथवा स्त्री जो विधिपूर्वक विवाहित नहीं है परन्तु प्रवंचना से यह विश्वास कारित करेगा कि वह विधिपूर्वक विवाहित हैं और सहवास करते हैं तथा भविष्य में विवाह करेंगे यह विश्वास दिलाते हैं। वह इस अपराध को करने वाले हैं तथा पूर्व पत्नि या पति के रहते हुए उसकी अनुमति के बिना पति या पत्नि अपने जीवन काल में पुनः दूसरा विवाह करेंगे तो वह धारा 494 के अनुसार सात वर्ष के कारावास से दण्डनीय है तथा पूर्ववर्ती विवाह को छिपाकर अन्य के साथ दूसरा विवाह करता है या करती है तो वह धारा 495 के अनुसार दस वर्ष के कारावास तथा जुर्माने से दण्डनीय है तथा विधिपूर्वक

विवाह के बिना कपटपूर्ण विवाह कर्म पूरा कर लेना अर्थात् छलकपट पूर्वक आशय से विवाहित होने का कर्म यह जानते हुए कि वह अभी अविवाहित है करता है तो वह धारा 496 के तहत सात वर्ष के कारावास से दण्डनीय होगा।

अनंगक्रीड़ा

अप्राकृतिक मैथुन करना अथवा कृत्रिम साधनों द्वारा कामाचार का सेवन करना अनंगक्रीड़ा है। अर्थात् कामसेवन के साधनों को छोड़कर अन्य साधनों से कामसेवन करना अनंगक्रीड़ा के अंतर्गत आता है। यह अनंगक्रीड़ा स्त्री और पुरुष दोनों के लिए अतिचार कहे गए हैं, क्योंकि पति के वियोग में या अविवाहित अवस्था में पुरुष के अभाव में हस्तमैथुन अथवा सहयोनिज अर्थात् स्त्री स्त्री के साथ तथा पुरुष पुरुष के साथ सम्बन्ध स्थापित करने को भी अनङ्गक्रीड़ा कहा है। इसी बात को आचार्य अकलंक देव ने राजवार्तिक में कहा है कि जिस प्रकार स्त्री और पुरुष का रति के समय शरीर संयोग होने पर स्पर्श सुख होता है उसी तरह एक व्यक्ति को भी हाथ आदि के संयोग से स्पर्श सुख का भान होता है अतः हस्तमैथुन भी मैथुन है इसे भी अनंगक्रीडा में परिगणित किया जा सकता है।[25]

भारतीय कानून ने भी अनंगक्रीड़ा को सदोष मैथुन क्रिया बताया है चाहे वह पति-पत्नि के मध्य ही क्यों न हो? इसे प्रकृति विरुद्ध अपराध की श्रेणी में गिना है, जिसके लिए धारा 377 के तहत आजीवन कारावास जिसकी अवधि दस वर्ष तक हो सकती है की सजा का प्रावधान है। इसमें जो कोई व्यक्ति किसी पुरुष, स्त्री या जीवजन्तु के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध स्वेच्छया से इन्द्रिय भोग करेगा, वह इस दण्ड का भागीदार है।

कामतीव्राभिनिवेश

विषयभोग और काम क्रीड़ा में तीव्र आसक्ति होना। उसके लिए

कामोद्दीपन करने वाली औषधियों का सेवन कर विषय वासना में प्रवृत्त होना। तीव्र काम प्रवृत्ति, सतत कामवासना से पीड़ित रहकर, विषय सेवन में लगे रहना कामतीव्राभिनिवेश है। दीक्षिता, अतिबाला तथा पशुओं आदि में मैथुन प्रवृत्ति करना कामतीव्राभिनिवेश के ही फल हैं।[26] इस प्रकार के काम तीव्रता के कारण असमय में भी कामसेवन किया जाता है और उस समय पत्नि के अभाव में वह कामतीव्रता वाला व्यक्ति किसी के साथ भी मैथुन सेवन कर लेता है, इससे बलात्कार, वेश्यासेवन, परस्त्रीगमन आदि पाप अनावश्यक हो जाते हैं तथा इस प्रकार के कामतीव्रता में स्थान आदि का चयन सम्यक् प्रकार से नहीं हो पाता। जिससे लोग तीर्थस्थल को अपवित्र कर देते हैं तथा उन होटलों में भी चले जाते हैं। जिनमें पुलिस के द्वारा छापा पड़ने पर अपना तथा अपने परिवार का सम्मान खो देते हैं तथा ऐसे लोगों में समय से पूर्व ही नपुंसकता आ जाती है। उनके अंदर संतान पैदा करने की शक्ति का अभाव हो जाता है।

भारतीय दण्ड संहिता में काम के तीव्र आवेग के लिए औषधियों के सेवन को अपराध नहीं माना गया है परन्तु तीव्रकामसेवन के परिणाम को अपराध माना गया है। जिसमें बलात्कार, वेश्यासेवन आदि अपराध आते हैं। यदि कोई व्यक्ति तीव्र कामसेवन से द्योतित होता हुआ स्त्री की इच्छा के विरुद्ध अथवा उस स्त्री की सम्मति के बिना, उस स्त्री को डराकर या अविवाहित अवस्था में स्त्री की सहमति के साथ जब उस स्त्री को विश्वास दिलाकर कि वह उससे विवाह करेगा। उस स्त्री का संभोग करता है, किसी मादक पदार्थ का सेवन कराकर उस स्त्री के साथ उसकी सहमति से संभोग करता है, वह सोलह वर्ष से कम आयु की स्त्री के साथ उसकी सहमति से सहवास करता है तो वह धारा 375 के तहत बलात्कार का दोषी कहलाता है, जिसकी सजा धारा 376 के तहत दो वर्ष से दस वर्ष तक हो सकती है तथा कामतीव्रता का परिणाम क्रूर हो सकता है इसके लिए धारा 376 (क), 376 (ख), 376 (ग), 376 (घ) के अनुसार

अपने पति से पृथक् रहने वाली पत्नि के साथ पति के द्वारा यदि सहवास किया जाता है तो वह दो वर्ष के कारावास से तथा अपने अभिरक्षा में की गई किसी स्त्री के साथ लोक सेवक के द्वारा संभोग करने पर पाँच वर्ष के कारावास से तथा जेल प्रतिप्रेषण-गृह, छात्रावास आदि के अधीक्षक द्वारा संभोग करने पर पाँच वर्ष के कारावास से तथा अस्पताल के प्रबंधक या कर्मचारी वृन्द आदि के किसी सदस्य द्वारा उस अस्पताल में किसी स्त्री के साथ संभोग करने पर पाँच वर्ष के कारावास से दण्डनीय है। इन धाराओं में वर्णित व्यक्तियों की स्थिति से ज्ञात होता है कि यह स्थितियाँ कामतीव्रता के कारण उत्पन्न होती हैं। कामतीव्रता के कारण जो लोग तीर्थ स्थल को अपवित्र करने के उद्देश्य से उनमें मैथुन सेवन करते हैं, उनके लिए भारतीय दण्ड संहिता में धारा 295 (क) के तहत धार्मिक विश्वासों का अपमान करने के उद्देश्य से मैथुन करता है तो वह तीन वर्ष के कारावास से दण्डित किया जाता है।

वेश्यागमन

विश्व के सभी चिंतकों ने वेश्यागमन को सर्वथा अनुचित माना है क्योंकि वेश्यागमन ऐसा दुर्व्यसन है, जो जीवन को कुपथ की ओर अग्रसर करता है। वह उस जहरीले साँप की तरह है जो चमकीला, लुभावना और आकर्षक है किन्तु बहुत ही खतरनाक है। वैसे ही वेश्या अपने श्रृंगार से, हावभाव और कटाक्ष से जनता को आकर्षित करती है। वेश्यागमन के लिए भर्तृहरि ने कहा है कि

वेश्यासौ मदनज्वाला रूपेन्धन समक्षिता।
कामिभिर्यत्र हूयन्ते यौवनानि धनानि च।।

अर्थात् वेश्या कामाग्नि की ज्वाला है, जो सदा रूप ईंधन से सुसज्जित रहती है। इस रूप ईंधन से सजी हुई वेश्या कामाग्नि ज्वाला में सभी के यौवन, धन आदि को भस्म कर देती है।

प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी के गौरव गरिमा का चित्रण करते

हुए कहा गया है, वह समुद्र के समान गम्भीर है, पानी के समान मिलनसार है, गाय के समान वात्सल्य की मूर्ति हैं, वह महान् उदार, स्नेह सद्भावना और सेवा की साक्षात् प्रतिमा है। वह सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा तीनों के सद्गुणों से समलंकृत है। पर वेश्या में नारी होने पर भी इन सभी सद्गुणों का अभाव है। लज्जा नारी का आभूषण है। शील सौन्दर्य है पर वेश्या इस सौन्दर्य और आभूषण से रहित होने के कारण कुरूप है। वेश्याओं से स्नेह की इच्छा करना बालू से तेल निकालने के समान है।

जैनदर्शन में ब्रह्मचर्य के अतिचार मात्र संकेत रूप में कहे गये हैं परन्तु ब्रह्मचर्य के पालन करने में सूक्ष्म रूप से अनेकों अतिचार लगते हैं। पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का पालन अर्हन्त परमात्मा करते हैं। जो अठारह हजार शीलव्रतों का पालन करते हैं, परन्तु मानव तो मात्र स्थूल रूप से ब्रह्मचर्य का पालन करता है। इसी कारण उसे प्रतिक्षण ब्रह्मचर्य में अतिचार लगने की संभावना रहती है। जैनदर्शन जहाँ इन अतिचारों के अलावा और भी अतिचारों की बात करता है। वहीं भारतीय दण्ड संहिता में किसी स्त्री को विवाह आदि करने के लिए विवश करता है। उस स्त्री का अपहरण करके उसके साथ संभोग करता है या कराता है तो वह धारा 366 के तहत दस वर्ष तक के कारावास की सजा का पात्र होगा तथा अप्राप्तवय लड़की जो अठारह वर्ष से कम आयु की है, के साथ अयुक्त संभोग करेगा या करायेगा तो वह धारा 366 (क) के तहत दस वर्ष के कारावास का भागीदार है तथा विदेश से या जम्मू कश्मीर राज्य से लड़की का आयात करने पर जिसकी उम्र इक्कीस वर्ष से कम है के साथ संभोग करने के लिए विवश करने पर या किसी दूसरे से विवश कराने पर संभोग करेगा या करायेगा तो वह भी धारा 366 (ख) के तहत दस वर्ष के कारावास का पात्र है। वेश्यावृत्ति आदि के लिए अप्राप्तवय लड़की को बेचने या खरीदने पर जिसकी उम्र अठारह वर्ष से कम की है या खरीदकर वेश्यावृत्ति के लिए पालता है तो वह भी धारा 372, 373 के तहत दस वर्ष का भागीदार होगा। जो कोई व्यक्ति स्त्री की लज्जा भंग

करने के अर्थ से उस पर हमला करता है या कराता है तो वह धारा 354 के तहत दो वर्ष के कारावास से दण्डित किया जायेगा तथा स्त्री की लज्जा भंग में उसे वस्त्रहीन करने के उद्देश्य से सार्वजनिक स्थलों में नग्न करेगा या करायेगा उसे धारा 354 (क) के तहत दस वर्ष तक के कारावास की सजा से दण्डित किया जायेगा।

इस प्रकार यदि व्यक्ति जैनदर्शन के अनुसार श्रावकों के योग्य ब्रह्मचर्य का पालन करता है तो वह बलात्कार सम्बन्धी, परस्त्री, वेश्यासेवन आदि पाप से तो बचता ही है साथ में शरीर सम्बन्धी कमजोरी, नपुंसकता, एड्स आदि क्षय रोगों से बचता है और भारतीय दण्ड संहिता के कानून का पालन भी स्वतः हो जाता है।

❑❑❑

परिग्रह परिमाणाणु व्रत एवं भारतीय दण्ड संहिता

पाप और साँप ये दोनों हानिप्रद हैं। विवेकी मानव इन दोनों से बचता है। परिग्रह भी एक भयंकर पाप है, जो जीवन को पतन के गहरे गर्त में डाल देता है। पर भ्रम से परिग्रह पाप को पुण्य मान लिया जाता है, किन्तु पुण्य के भेदों में परिग्रह का कहीं नामोनिशान नहीं है।

परिग्रह को पाप का मूल माना है। परिग्रह के कारण अन्य अनेक पाप पनपते हैं। एतदर्थ ही परिग्रह के लिए लोग हिंसा करते हैं, झूठ बोलते हैं, चोरियाँ करते हैं, मिलावट और धोखेबाजी करते हैं और दूसरों को अपमानित करते हैं। आचार्य अकलंकदेव ने परिग्रह की परिभाषा कहते हुए कहा है कि **मूर्च्छा परिग्रहः**[27] अर्थात् वस्तुओं के प्रति ममत्व का भाव रखना परिग्रह है तथा परिग्रह में परिमाण अर्थात् सीमा निर्धारित करना परिग्रह परिमाणाणु व्रत है।

परिग्रह के कारण ही महायुद्ध हुए हैं। इतिहास के पृष्ठों पर ऐसे सैंकड़ों व्यक्तियों के उदाहरण हैं, जिन्होंने परिग्रह के लिए महापाप किए। माता-पिता, पुत्र और पुत्रियाँ, भाई और बहन के मधुर सम्बन्ध भी परिग्रह के कारण अत्यन्त कटु हो गए, यहाँ तक की एक दूसरे के संहारक बने।

परिग्रह दोषों का आगार है। विषमता का कारण है। एतदर्थ ही परिग्रह पर नियंत्रण करने हेतु परिग्रह परिमाण व्रत का विधान है। श्रावक जो कुछ भी संग्रह करता है, वह केवल आवश्यकता की पूर्ति के लिए करता है। वह संतोष पूर्वक स्वयं की और अपने आश्रितों की उचित इच्छाओं को पूर्ण करता है। श्रावक के इस प्रकार परिग्रह परिमिति नाम का स्थूल परिग्रह परिमाणाणु व्रत है।

सम्पत्ति नहीं संतोष

आज का मानव भौतिक विकास को अपने जीवन का परम और चरम लक्ष्य मान रहा है। वह सम्पत्ति के लिए अपने आपको समर्पित कर रहा है और भौतिक आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए अध्यात्मिक सद्गुणों को तिलाञ्जलि दे रहा है। यही कारण है कि विकास विनाश का कारण बन गया है। परिग्रह परिमाणाणु व्रत इसकी ओर संकेत करता है कि जीवन का चरम व परम लक्ष्य सम्पत्ति नहीं संतोष है।

परिग्रह परिमाणाणुव्रत की भावनाएँ

आचार्य अकलंकदेव ने परिग्रह परिमाणाणुव्रत की रक्षा के लिए इन्द्रियों के विषयों में अंकुश लगाने की बात कहते हुए कहा है कि **मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय विषय रागद्वेष वर्जनानि पञ्च**[28] अर्थात् मन को अच्छे लगने वाले पाँच इन्द्रिय के विषय में राग तथा मन को रोचक नहीं लगने वाले पाँच इन्द्रिय के विषयों में द्वेष नहीं करना चाहिए। संसार में पाँच इन्द्रियों के कारण ही जीव पाप करता है, परिग्रह करता है। पाँच इन्द्रियों की इच्छाओं की पूर्ति के लिए धन आदि दश प्रकार का बाह्य परिग्रह जोड़ता है। अनिष्ट विषयों को छोड़ने का प्रयत्न करता है। स्पर्शन इन्द्रिय के लिए वह अनेक प्रकार के पापोपार्जित वस्तुओं का संग्रह करता है। रसना इन्द्रिय के वशीभूत खाद्य सामग्री का संचय तथा पुराने धान्य या अमर्यादित मसाले आदि वस्तुओं का संग्रह कर भक्षण करता है। घ्राण इन्द्रिय के आधीन होकर इत्र आदि पाप जनित वस्तुओं का संग्रह करता है तथा चक्षु इन्द्रिय के वशीभूत हो अश्लील चलचित्रों को देखने या बेचने के उद्देश्य से उन साधनों को एकत्र करता है और कर्ण इन्द्रिय के वश में गाने आदि असभ्य शब्दों को भी सुनने के लिए रेडियो आदि इलेक्ट्रोनिक्स पदार्थों का संग्रह करता है परन्तु भारतीय दण्ड संहिता में इन विषयों के संग्रह करने में दण्ड का विधान नहीं है परन्तु यहीं वस्तु अन्याय के साथ संग्रह की जाती है या अन्याय से उत्पादित वस्तु का संग्रह करता है या देश

में निषिद्ध वस्तुओं का संग्रह करता है तो विदेशी कानून के अन्तर्गत निर्धारित सजा का पात्र है।

परिग्रह परिमाणाणुव्रत के अतिचार

इस व्रत का महत्त्व अन्य दृष्टि से भी है। इस विश्व में स्वर्ण, चाँदी, हीरे, पन्ने, माणिक्य, मोती, भूमि, अन्न, वस्त्रादि जितने भी पदार्थ हैं, वे परिमित हैं। जब एक व्यक्ति उनका अधिक संग्रह करता है तब विषमता की विभीषिका भड़क उठती है। परिग्रहपरिमाणाणु व्रत उन विभीषिकाओं को शान्त करता है। जीवन में सुख और शान्ति पैदा करता है। जैन आगम साहित्य में उन समस्त परिग्रहों को दश विभागों में विभक्त किया है। इन दस प्रकार के परिग्रह को बाह्य परिग्रह के नाम से जाना जाता है। आचार्य उमास्वामी ने तत्त्वार्थ सूत्र में कहा है कि **क्षेत्रवास्तु हिरण्यसुवर्ण धनधान्यदासी दास कुप्यभाण्डप्रमाणातिक्रमः**[29] अर्थात् क्षेत्र, मकान, चाँदी, सोना, धन धान्य, दास, दासी, कपड़े, बर्तन आदि दस प्रकार के बाह्य परिग्रह हैं। इनकी सीमा निर्धारित करने के लिए जैनदर्शन श्रावकों को विशेष जोर देता है। परन्तु भारतीय दण्ड संहिता में परिग्रह को जोड़ना, परिगृहीत वस्तु के प्रति ममत्व का भाव रखना दण्डनीय नहीं है परन्तु सोना, चाँदी, धन, धान्य, क्षेत्र, मकान आदि वस्तु को सीमा से अधिक रखना और उसका टेक्स नहीं चुकाने पर इन्कम टेक्स की कार्यवाही के अन्तर्गत पृथक् सजा का प्रावधान है तथा अमर्यादित धन संपदा सरकाराधीन हो जाती है। इसी परिग्रह के लिए लोग न्याय-अन्याय का विचार नहीं करते। अनीति पूर्वक बिना पैसा दिये दास-दासी अर्थात् नौकर-नौकरानी को अपने घर पर रखता है तो वह भी धारा 370 के तहत 7 साल की सजा प्राप्त करेगा।

श्रावक मुनि की तरह परिग्रह का पूर्ण रूप से त्याग नहीं कर सकता परन्तु उस पर अंकुश अवश्य लगा सकता है। भारतीय दण्ड संहिता में जैनदर्शन के समान परिग्रह को पाप की संज्ञा नहीं दी है परन्तु

परिग्रह के फल से जो पाप उत्पन्न होता है उसके लिए दण्ड का विधान अवश्य किया है। श्रावक परिग्रह के वशीभूत होकर चोरी करना, दूसरे के धन को हड़प जाना, जाली दस्तावेज तैयार करना, पर सम्पत्ति पर कब्जा करना, चोरी की वस्तु को खरीदना, राज्य के विरुद्ध कार्य करना, कम ज्यादा नाप तौल करना, अच्छी वस्तु में खराब वस्तु मिलाना, वध, बंधन, अतिभारोपण, अन्नपान निरोध, मिथ्योपदेश, कूटलेखक्रिया आदि कार्य तथा व्यापार व्यवहार में करता है जिसके लिए भारतीय दण्ड संहिता में पृथक् -पृथक् धाराओं द्वारा सजा निर्धारित है जिसका वर्णन पूर्व में पापों के वर्णन में किया जा चुका है।

इस प्रकार इन पाँचों व्रतों के अंशतः पालन करने से भारतीय दण्ड संहिता की अधिकांश धाराओं से बचा जा सकता है। और इसका अंशतः पालन अणुव्रत है तथा पूर्णतः पालन का मुनियों के लिए है जिनके लिए भारतीय दण्ड संहिता की कोई भी धाराएँ नहीं हैं।

❑❑❑

परिशिष्ट

संकल्पी हिंसा

जबलपुर में मंगतराम नाम का एक व्यक्ति रहता था। वह स्वभाव से आलसी व गरीब था। उसके पास सदैव पैसों का अभाव रहता था। उसने पशु हत्या करके उनका माँस बेचने का काम चालू किया। उसने एक छोटी होटल खोली। जिसमें वह ऊपर माँस खिलाता तथा नीचे तलघरे में बिल के पैसे लेता। उस मंगतराम में दिन-प्रतिदिन लालच बढ़ने लगा। वह किसी के पैसे उधार नहीं करता था और न पैसे कम लेता था। उसने पैसा वसूलने के लिए चार पहलवान रखे थे। वे पहलवान जो पैसा नहीं देते थे, उनसे जबरदस्ती पैसा वसूलते। पैसा नहीं होने पर उस व्यक्ति को मारकर उसका माँस पकाकर बेचता था। एक दिन एक माँसाहारी फौजी उस दुकान पर माँस खाने के लिए पहुँचता है। वह एक व्यक्ति के सामने बैठा फौजी का माँस आने में देरी थी। फौजी ने ताजा माँस मंगाया। वह सामने वाला व्यक्ति नीचे तलघरे में गया। परन्तु उसकी जेब पहले ही कट चुकी थी। इस कारण उसके पास पैसे नहीं थे। उसने मंगतराम के बहुत हाथ-पैर जोड़े, बाद में देने का वादा किया, माता-पिता की, भगवान् की कस्में खायीं। परन्तु उस निर्दयी मंगतराम का हृदय नहीं पिघला। उसने पहलवानों से उस व्यक्ति से पैसा वसूलने को कहा। पहलवानों ने उसे मारकर उसका माँस पकाकर उस फौजी को परोसा। फौजी ने ऐसा स्वाद वाला माँस पहली बार खाया था। खाते समय उसकी थाली में मनुष्यों की अंगुलियाँ आ गई। फौजी समझ गया कि यह मनुष्यों का माँस है। उसने बचे हुए माँस को अपने जेब से थैली निकाल कर पैक किया तथा तलघरे में पैसा देकर सीधे जबलपुर सेना मुख्यालय पहुँचा और सारी बात बताई। सेना ने कुछ ही समय में होटल को घेर लिया और

पुलिस को बुलाया। छानबीन हुई। फौजी ने वह माँस जेब से निकाल कर दिया, उस दुकान का बिल दिया। फौजी को पता चला कि वह जिस माँस को खा रहा था। वह माँस उसके सामने बैठे हुए व्यक्ति का था। फौजी ने उस दिन से सभी प्रकार के माँस का त्याग कर दिया और पुलिस ने मंगतराम और होटल में काम करने वालों को सजा दिलाई तथा वह होटल हमेशा के लिए सील कर दी गई।

जैनदर्शन के अनुसार मंगतराम महापापी था। उसने संकल्पी हिंसा की थी और उसके साथ उस होटल में काम करने वाले, वहाँ के पहरेदार, परोसने वाले वेटर, रसोईया और पहलवान सभी लोग संकल्पी हिंसा करने वाले थे। उस होटल में माँस खाने वाले भी हिंसक थे। उस होटल में पशुओं का माँस मिलता था, जिसे कानून ने अपराध नहीं माना परन्तु जैनधर्म में सभी प्रकार के पशुओं एवं जीवों की हिंसा पाप के अन्तर्गत आती है। इसे संकल्पी हिंसा भी कहते हैं।

भारतीय दण्ड संहिता में पशुओं के माँस विक्रय को अपराध की श्रेणी में नहीं लिया गया है। परन्तु कुछ पशुओं को मारने को अपराध माना है। जिसमें गोहत्या निषेध अधिनियम, वन्यप्राणी संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत कानून में निर्दिष्ट प्राणियों की हत्या करता है तो वह गोहत्या निषेध अधिनियम एवं वन्यप्राणी संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत सजा का पात्र है। भारतीय दण्ड संहिता में मनुष्यों के संकल्प पूर्वक मारने पर धारा 302 के तहत मृत्यु दण्ड या आजीवन कारावास का प्रावधान है। मंगतराम की होटल से मिले मनुष्यों के माँस के सबूत, वन्य जीवों की खाल, गाय की हड्डियाँ एवं कान, आँख आदि से मंगतराम इन सभी धाराओं में प्राप्त सजा का पात्र है।

विरोधी हिंसा

मथुरा नगर में सेठ धनपति एवं सेठानी मनोवती के रंजनदेव एवं वसुभूति नामक दो अत्यन्त सुन्दर एवं सुशील पुत्र थे। माता-पिता के

संस्कारों से वे वृद्धि को प्राप्त हुए। बड़े होने पर बड़ा बेटा डॉक्टर बना तथा मन से चंचल छोटा बेटा वसुभूति दुष्संगति में फँस गया। उसकी संगति चोरों तथा बदमाशों के साथ अधिक थी। वह दुष्संगति में पड़ने के साथ ही धर्म के प्रति नास्तिक भावना का भी था। माँ को रंजनदेव प्रतिदिन मंदिर ले जाता था, परन्तु किसी कारण वश एक दिन वह मथुरा से बाहर चला गया। जिस कारण माँ ने वसुभूति से मंदिर ले जाने को कहा। वसुभूति ने पहले तो माँ को मना कर दिया परन्तु रंजनदेव के नहीं होने पर उसे माँ को मंदिर ले जाना पड़ा। माँ तो मंदिर के अंदर भगवान् की पूजा भक्ति में लग गयी और वसुभूति मंदिर के बाहर ताश खेलता हुआ समय व्यतीत करने लगा। यह प्रतिदिन की चर्या हो गई। माँ ने भी उसे बहुत समझाया तब जाकर वह प्रतिदिन मंदिर में आने लगा परन्तु भगवान् के दर्शन करने नहीं जाता था। कुछ दिनों के बाद रंजनदेव भी बाहर से वापस आ गया। माँ अब दोनों को साथ लेकर मंदिर जाने लगी। एक दिन कुछ बदमाश लोगों ने जो वसुभूति के शत्रु थे। अचानक वसुभूति और उसके परिवार के ऊपर हमला कर दिया। जिसमें रंजनदेव तथा वसुभूति दोनों ने उन बदमाशों का सामना किया और उन लोगों को मार भगाया। जिसमें एक व्यक्ति की समय पर ही मृत्यु हो गई। पुलिस केश होने पर यथायोग्य सभी को सजा मिली, जिसमें रंजनदेव और उसकी माँ को बरी किया गया।

जैनदर्शन के अनुसार रंजनदेव और वसुभूति दोनों ने बदमाशों को मारा इस कारण से वे दोनों अपराधी हैं परन्तु उन दोनों ने संकल्प पूर्वक उनकी हिंसा नहीं की मात्र अपने बचाव के लिए विरोधी हिंसा की। इस कारण विरोधी हिंसा पाप के भागीदार दोनों हुए।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार वसुभूति पूर्व में ही पुलिस रिकार्ड में बदमाश की श्रेणी में था तथा बदमाशों ने प्रतिशोध के कारण उन पर हमला किया था। इस कारण उन बदमाशों को धारा 302 के तहत

मृत्यु दण्ड या आजीवन कारावास की सजा एवं जुर्माना देना होगा तथा वसुभूति के द्वारा विरोधी हिंसा किए जाने पर भी पूर्व कर्म के कारण वह आदतन अपराधी है इस कारण वह अपने विरोधी हिंसा के साक्ष्य अदालत में नहीं दे पाया। जबकि रंजनदेव पेशे से डॉक्टर है, जिससे उसने अपने बचाव के लिए विरोधी हिंसा की और भारतीय दण्ड संहिता में विरोधी हिंसा में सजा का भागीदार नहीं होता परन्तु विरोधी हिंसा में सीमा का अतिरेक न हो। इस कारण रंजनदेव मुक्त हुआ और वसुभूति को गैर इरादतन हत्या करने पर धारा 304 एवं 304 अ के तहत आजीवन कारावास की सजा मिली।

वध, बंध

अहमदाबाद शहर में एक सेठ का व्यापार बहुत अच्छा चलता था। जिसका नाम धनीराम था। उसकी दुकान में लगभग 50 नौकर काम करते थे। वे व्यापार के स्तम्भ थे। उसने कपड़े के व्यापार को पूरे अहमदाबाद शहर में फैला रखा था और उसने व्यापार को बढ़ाने के लिए ऊन का व्यापार करना भी प्रारम्भ कर दिया तथा उसमें 300 मजदूरों को काम में लगाया। उसके व्यापार में अधिकांश मजदूर दूसरे राज्य के थे। जिन्हें वह कम पैसे में लगाता था। वह प्रारम्भ के दो माह तक मजदूरों को दनख्याह नहीं देता था। जिससे मजदूर उसके आधीन रहते थे। उसने कुछ दिन के बाद उन लोगों से काम लेना चालू कर दिया, जिनके ऊपर उसका कर्ज था। उनको बंधुआ मजदूर बनाकर काम कराता था तथा वेतन वाले मजदूरों को छोड़ दिया। बंधुआ मजदूरों को मात्र रहने खाने को देता था। और गलती करने पर उनकी कोड़ों से पिटाई करता था तथा एक कमरे में बंद कर देता था। इस प्रकार उसका व्यापार मजदूरों को बिना वेतन दिए ही उन्नति कर रहा था। आखिर यह पाप का काम कब तक चलता। पाप को कभी न कभी नजर लगनी थी। एक मजदूर जो अपने पैसे मजदूरी में चुका दिया था। उससे सेठ ने जबरदस्ती काम कराना चाहा।

आखिर वह मजदूर वहाँ से भाग गया और उसने पुलिस को रिपोर्ट कर दी। पुलिस ने तत्काल उस स्थान को सील कर दिया तथा सेठ को गिरफ्तार करके 300 बंधी मजदूरों को छुड़ाया।

जैनदर्शन के अनुसार सेठ धनीराम ने बंध नामक हिंसा की है। तथा मारने, प्रताड़ित करने पर वध नामक हिंसा का भागीदार भी है तथा मजदूरों से बिना वेतन के काम कराने से उनका शोषण करने का पापी भी है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार धनीराम ने 300 मजदूरों को बंधी बनाकर उनसे काम कराया। इसीलिए वह धारा 342 के तहत 1 साल कारावास अथवा 1000 रुपये जुर्माना अथवा दोनों की सजा का पात्र है तथा वह उनको कोड़ों से मारता था, इसलिए धारा 323 के तहत 1 से 3 साल कारावास अथवा 1000 रुपये जुर्माने का अथवा दोनों का दोषी है।

छेद

चण्डीगढ़ शहर में एक ग्रुप बाल व्यापार का कार्य करता था। जिसका मुखिया जगमोहन था। वह देश की जिस जगह में जाता वहाँ से छोटे बच्चों का अपहरण कर लेता। वह बच्चों को बेहोशी की दवा देकर अपने साथ ले जाता तथा बच्चों को डराकर, धमकाकर उनसे घर के सारे काम करवाता। उन्हें जेब काटना, छोटी-छोटी चोरियाँ करना सिखाता। कुछ मासूम बच्चों के हाथ काटता, पैर काटता, कहीं कान काटता, कहीं एक आँख फोड़ता था। फिर उनसे भीख मंगवाने का कार्य करवाता था। तथा कुछ बच्चों को इलाज के लिए विदेश ले जाकर वहाँ भीख मंगवाता था। विदेश में भीख मांगने पर अधिक पैसे मिलते थे। इस प्रकार वह बाल व्यापार करता था। एक दिन जगमोहन का एक आदमी बच्चे का अपहरण करते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया। पुलिस की मार से उसने जगमोहन के पूरे ग्रुप का राज खोल दिया। पुलिस ने जगमोहन को पकड़ लिया। उसके ग्रुप ने जहाँ जहाँ बच्चे भेजे थे, उन सबको वापस लाया गया। जिन बच्चों को अपने घर का पता मालूम था, उनको घर भेज दिया गया। जो बच्चे

छोटी उम्र में अपहरण किए गए थे। जिससे उन्हें अपने घर का पता मालूम नहीं हो सका उनको अनाथाश्रम में भर्ती कराया गया। जगमोहन तथा उसके ग्रुप को कानून के अनुसार सजा दी गई।

जैनदर्शन के अनुसार जगमोहन ने बच्चों की चोरी का कार्य किया तथा उसने बच्चों के अंग छेद का कार्य किया। जो हिंसा के अंतर्गत आता है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार जगमोहन और उसके ग्रुप ने भीख मंगाने के उद्देश्य से बच्चों का अपहरण किया तथा अंगछेद किया जिससे वे धारा 363 (क) के तहत 10 वर्ष के कारावास की सजा के पात्र हैं। बच्चों को डरा धमकाकर कार्य करवाया, जिससे वे धारा 503 के तहत दोषी है तथा धारा 506 के तहत 2 साल कारावास की सजा का पात्र है। बच्चों को चोरी करना सिखाना, जेब काटना सिखाना आदि कार्यों से दुष्प्रेरण के अंतर्गत धारा 110 से 120 के तहत भिन्न-भिन्न सजा का पात्र है। शिशुओं की चोरी में धारा 310 में वर्णित अपराध के लिए धारा 311 के अनुसार आजीवन कारावास का पात्र है।

अतिभारोपण

इन्दौर शहर के पास बड़वा नामक गाँव था। जिसमें सेठ सज्जनसिंह रहते थे। उनका कार्य खेती करना था। वे गाँव के जमींदार थे। उनके खेतों पर सैकड़ों लोग काम करते थे। वे सदा अपने काम पर ध्यान देते थे। उनको व्यवहारिकता से कोई नाता नहीं था। अधिकांश समय वे अपने नौकरों से आवश्यकता से अधिक काम करवाते थे। मजदूर यदि घर से सुबह आते थे तो शाम 7 बजे ही अपने घर जाते थे। जो इस समय का उल्लंघन करता था, उसकी मजदूरी से पैसे काट लिए जाते थे। इस कारण सभी मजदूर समय से पहले ही आ जाते। उन मजदूरों में रामू नामक अत्यन्त गरीब मजदूर था। वह पैसे कटने के डर से समय से पहले ही आ जाता था। एक दिन वह समय से पहले आने के चक्कर में घर से

भोजन किए बिना ही आ गया। उसी दिन सेठ ने उससे दुगुना काम करवाया। उसे बैठने तक की फुर्सत नहीं दी। काम पूरा करने पर पानी पीने को देता था। बेचारा रामू भूखा तो था ही और प्यासा काम करता रहा। अचानक काम करते करते उसे चक्कर आ गया और वह सड़क पर गिर गया, जिस कारण सिर में पत्थर की चोट लगने से उसकी मौत हो गई। रामू के घर वालों को जब मौत की खबर मिली तो उन्होंने पुलिस में सेठ के खिलाफ रिर्पोट लिखवाई। पुलिस ने सेठ को गिरफ्तार कर लिया और अन्य लोगों से पूछताछ की जिससे रामू की मृत्यु का कारण सेठ के द्वारा रामू से अधिक कार्य कराना निकला। सेठ सज्जनसिंह को कोर्ट ने सजा सुनाई।

जैनदर्शन के अनुसार सेठ सज्जनसिंह मजदूरों से अतिभार रूप काम कराता था जिसे अतिभारारोपण कहा गया है। जिसे हिंसा पाप के अन्तर्गत लिया गया है।

भारतीय दण्ड संहिता में सेठ सज्जनसिंह मजदूरों से अधिक समय तक काम कराता था। जबकि सरकार की ओर से मजदूरी का कार्य 8 घंटे नियत है, इस कारण सेठ धारा 374 के तहत 1 वर्ष कारावास तथा जुर्माने की सजा का पात्र है तथा सेठ ने रामू के साथ अमानवीय व्यवहार किया, उससे भूखे प्यासे काम लिया। जिससे उसकी मृत्यु हो गई। इस कारण मृत्यु में सेठ का व्यवहार निमित्त बना जिससे सेठ श्रम विधि अधिनियम के तहत सजा का पात्र है।

अन्नपान निरोध

टोंक जिले के निवाई गाँव में ठाकुर बलराम सिंह रहता था। उसके यहाँ गायों का पालन पोषण होता था तथा गायों की देखभाल के लिए उसके पास 45 ग्वाले थे। जो उसके पास रहते थे तथा वहीं खाना खाते थे। उन ग्वालों को समय-समय पर खाना मिलता था तथा साल में 10 दिन की छुट्टी दी जाती थी। जो ग्वाला कामचोरी करता था उसका एक समय का भोजन बंद कर दिया

जाता था तथा दूध की चोरी करने वाले का 5 दिन का दूध बंद कर दिया जाता था। एक श्याम सुन्दर नाम का ग्वाला ठाकुर बलराम सिंह के यहाँ बड़ी लगन से बहुत सालों से काम कर रहा था। उसके बुढ़ापे में पथरी हो गई तथा अल्सर की बीमारी भी थी। इस कारण वह भूखे पेट काम नहीं कर सकता था तथा अधिक काम करने में उसे जल्दी थकान हो जाती थी। एक दिन वह भूख लगने पर ठाकुर से बिना पूछे अपने हिस्से का दूध पी लिया तथा अधिक थक जाने के कारण वह सो गया। पता चलने पर ठाकुर ने श्याम सुन्दर का 5 दिन का दूध बंद कर दिया तथा उस दिन का भोजन भी बंद कर दिया। जिस कारण वह दवाई नहीं खा पाया तथा भूखे पेट तड़फ-तड़फ कर मर गया। पुलिस को पता चलने पर पुलिस ने ठाकुर को यथायोग्य सजा दिलवाई।

जैनदर्शन के कारण किसी का अन्नपान निरोध करना हिंसा के अंतर्गत आता है। जिसका भागीदार ठाकुर बलराम सिंह है।

भारतीय दण्ड संहिता में किसी को अमानवीयता के कारण बिना कारण सजा देकर भूखा प्यासा रखना दण्डनीय अपराध है। इसकारण बलराम सिंह धारा 304 (क) के तहत 2 वर्ष के कारावास की सजा का पात्र है।

वचन का दुरुपयोग

शिमला शहर के बीचोंबीच रामसिंह कन्या महाविद्यालय था। जिसमें लड़कों का प्रवेश वर्जित था। वहाँ कन्याएँ ही पढ़ती थीं तथा महिला शिक्षक ही पढ़ाते थे। उससे कुछ दूर जयसिंह महाविद्यालय था। जिसमें लड़के तथा लड़कियाँ दोनों पढ़ते थे। परन्तु कन्या महाविद्यालय पास में होने से जयसिंह महाविद्यालय में लड़कियों की संख्या न के बराबर थी। अधिकतर लड़के रामसिंह कन्या महाविद्यालय के आसपास लड़कियों को देखने के लिए आते थे। जिनमें विक्रम नाम का लड़का सलोनी नाम की लड़की को पसंद करता था। उसे रिझाने के लिए

अश्लील गाने, कामोत्तेजक गाने, अश्लील चुटकुले आदि सुनाता था। जो सलोनी को पसंद नहीं था। सलोनी विक्रम को कतई पसंद नहीं करती थी। एक दिन सलोनी ने अपने प्रिंसपल से विक्रम की शिकायत कर दी। प्रिंसपल ने विक्रम को अलग से समझाया परन्तु लातों के भूत बातों से कहाँ मानते हैं? विक्रम भी नहीं माना तथा उसकी हरकतें दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थीं। सलोनी ने अपने पिता को साथ लेकर पुलिस रिपोर्ट कर दी। पुलिस ने विक्रम को गिरफ्तार कर मुकदमा चलाया।

जैनदर्शन के अनुसार इस प्रकार के गाने गाना, चुटकुले सुनाना वचनों का दुरुपयोग है। ऐसे व्यक्ति को भविष्य में वचन मिलना दुर्लभ हैं तथा विक्रम ने सलोनी के हृदय को दुखाया इस कारण वह हिंसा का भी दोषी है। उसने अब्रह्म से युक्त वचनों का उपयोग किया इससे वह कुशील पाप का भी दोषी है।

भारतीय दण्ड संहिता में अश्लील पावड़े, चुटकुले, आदि बोलने पर धारा 294 के तहत 3 माह के कारावास की सजा तथा जुर्माना देय होता है। जिसकी सजा विक्रम को अदालत ने दी।

मिथ्योपदेश

देश का एक ऐसा नगर जो सज्जन पुरुषों का दुर्ग माना जाता था। जिसका नाम अरिहंतपुर था। वहाँ का मुखिया अरुहा सेठ था। जिसके अङ्ग-अङ्ग से सज्जनता झलकती थी। इसके विपरीत अरिहंतपुर से 40 मील दूर निरालागढ़ नाम का गाँव था। जिसमें हर प्रकार के दुर्जन निवास करते थे। जिनका मुखिया घोषवाहन था, जो अत्यन्त दुर्जन परन्तु प्रियवादी था। उसके मन में कभी अच्छे कार्य करने के विचार उत्पन्न ही नहीं होते थे। यदि वह किसी को सलाह देता तो अहित करने वाली होती और दिन-रात झूठ का सहारा लेता था। वह झूठ का जीता जागता देवता था। इन दोनों गाँवों के स्वभाव की खबर दूर-दूर तक फैली हुई थी। आखिरकार लोग अच्छे की तारीफ करते तथा बुरे की निंदा करते हैं। यह सुनकर घोषवाहन

मुखिया ने विचार किया कि इस अरिहंतपुर नगर की अच्छाईयों के कारण लोग हमारे गाँव की निंदा करते हैं। इसीलिए अब मैं इस गाँव से अच्छाई समाप्त कर दूँगा और उसने अपने गाँव में पंचायत बुलाकर अरिहंतपुर नगर के विरोध में भाषण दिया। ऐसा उत्तेजक भाषण देने से लोगों के मन में अरिहंतपुर के प्रति और अधिक घृणा उत्पन्न हो गई। वह घोषवाहन मुखिया अपने साथ चार युवकों को लेकर अप्रत्याशित रूप से अरिहंतपुर गाँव में रहने चला गया। जिससे वह वहाँ के माहौल को खराब कर अरिहंतपुर के नागरिकों के मन में एक-दूसरे के प्रति वैमनस्यता उत्पन्न करने लगा। भाई को भाई के प्रति भड़काकर उनके मध्य झगड़ा करवा देना, पति-पत्नि के मध्य अविश्वास उत्पन्न करवाना, दोस्तों के बीच धोखा देने के भाषण देना, इत्यादि बुरी आदतों को उत्पन्न करने लगा। वहाँ की पुलिस जो शान्त प्रिय थी। जिसके पास आज तक ऐसी शिकायतें नहीं आती थी। छोटी-छोटी शिकायतों को गाँव का मुखिया शान्त तरीके से सुलझा देता था। जिससे लोगों में लड़ाई-झगड़े नहीं होते थे। परन्तु अब पुलिस अचंभित थी कि ऐसी शिकायतें क्यों आ रही हैं? पुलिस ने इसका मूल कारण जानना चाहा। वहाँ का थानेदार शिकायतें लिखता गया परन्तु उस पर कोई कार्यवाही नहीं करता। वह थानेदार गाँव के मुखिया के पास पहुँचा और परामर्श किया तो पता चला कि गाँव में अप्रत्याशित लोग जब से आए हैं, तब से शान्त माहौल खराब हो रहा है। पुलिस ने छानबीन की और उनको गिरफ्तार किया। उनसे सारी कहानी उगलवाई। फिर पुलिस ने शिकायत कर्ताओं को बुलाकर समझाया उन्हें असली बात बताई और पाँचों पर केस दर्ज कर मुकादमा चलाया तथा सजा दिलवाई। इस प्रकार देश का शासक वर्ग मूल समस्या पर अंकुश लगाकर कुछ तथ्यों को सजा दिलाती है तो देश स्वयं प्रगति करेगा।

जैनदर्शन के अनुसार घोषवाहन मायाचारी से युक्त था तथा उसने गाँव के लोगों को मिथ्योपदेश देकर अरिहंतपुर के प्रति घृणा उत्पन्न की। ऐसे मिथ्योपदेश को असत्य की कोटि में गिना गया है।

भारतीय दण्ड संहिता में मिथ्योपदेश करना अपराध की श्रेणी में आता है। घोषवाहन ने मिथ्योपदेश दिया। इस कारण वह धारा 505 के तहत तीन साल के कारावास की सजा का पात्र है तथा उसने अरिहंतपुर गाँव को अपमानित करने के लिए उद्देश्य से शान्त माहौल अशान्त किया। जिससे वह शान्तिभंग मामले में धारा 504 के तहत 2 साल के कारावास एवं जुर्माने की सजा का पात्र है।

रहोभ्याख्यान

भोपाल शहर के अरेरा कॉलोनी में गोपाल नामक एक शिक्षक अपनी पत्नि रंजीता के साथ रहता था। उसके पास में भोलाराम नामक एक युवक रहता था। जो दूसरों की घरेलू जीवन को देख ईर्ष्या करता था। एक दिन गोपाल और उसकी पत्नि रंजीता के बीच गुप्त बातें एवं गुप्त क्रियाएँ चल रही थीं। जिसे भोलाराम ने चोरी से रिकार्ड़ कर ली तथा उनकी फोटो खींचकर उनको समाचार पत्र वालों से कुछ पैसे लेकर छपवा दिया। रंजीता ने जब यह समाचार पढ़ा तो वह अपमान सहन नहीं कर पाई तथा उसने छत से कूदकर जान दे दी। पति को जब यह बात पता चली तो उसने अखबार वालों पर केस कर दिया। तब अखबार वालों से न्यूज छपवाने वाले भोलाराम का नाम सामने आया। भोलाराम के ऊपर गोपाल को बदनाम करने के उद्देश्य से गुप्त बात को उजागर करने का आरोप लगा साथ ही रंजीता की मृत्यु का कारण बनने से वह हत्या का अप्रत्यक्ष आरोपी हुआ।

जैनदर्शन के अनुसार भोलाराम गोपाल की गोपनीय बातों को उजागर करने का दोषी है। जो असत्य की कोटि में आता है। परन्तु वह हत्या का आरोपी नहीं है, क्योंकि उसने रंजीता को आत्महत्या करने के लिए प्रेरित नहीं किया। रंजीता ने ना समझी के कारण आत्महत्या की।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार भोलाराम ने दूसरे की गोपनीयता को बदनामी के उद्देश्य से प्रकट किया। इस कारण धारा 500 के तहत 2

वर्ष के कारावास का दोषी है तथा हत्या में अप्रत्यक्ष कारण होने से धारा 306 के तहत 10 वर्ष के कारावास की सजा का पात्र है।

कूटलेखक्रिया

जबलपुर में भीखम सेठ रहता था। उसकी अनाज विक्रय की दुकान थी। वह अनाज विक्रय में पूरे क्षेत्र में प्रसिद्ध था। वह अपने दुकान में लेनदेन का हिसाब दो बहियों में करता था। जिसमें पहली बही में कुछ समान ही लिखता था तथा दूसरी बही में पूरा हिसाब रखता था। वह पहली बही का आडिट कराता था। जिसे वह नम्बर एक की कमाई दर्शाता था। और दूसरी बही खाता को गुप्त रखकर टेक्स की चोरी करता था। अधिक दिनों तक पाप कहाँ छिपता है? एन्कम टेक्स ऑफीसर ने दुकान में माल की आवक जावक को देखकर तथा बहीखाता देखकर उसके मन में शक हो गया। उसने एन्कम टेक्स का छापा मार दिया। उसकी अघोषित आय सील कर दी गई।

जैनदर्शन के अनुसार जाली बही खाते बनाना कूटलेखक्रिया के अन्तर्गत आता है। सेठ भीखम ने असली बही और नकली बही बनाकर कूटलेखक्रिया की है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार भीखम सेठ ने नकली बहीखाते प्रकट किए। जिससे वह चोरी का दोषी है, परन्तु उसने सत्य को भी छुपाया है। इससे वह धारा 477 (अ) के तहत 7 वर्ष के कारावास की सजा का पात्र है।

कूटलेखक्रिया

मुम्बई के दादर में टीकमचन्द नाम का व्यक्ति रहता था। वह स्कूल का हेडमास्टर था। वह स्कूल में आने वाली चीजों के दाम दुगुने चढ़ाकर जाली बिल बनाकर स्कूल समिति को धोखा देता था। एक दिन उसका यह गोरखधंधा पकड़ा गया और स्कूल समिति ने उसे निकाल दिया। वह स्कूल

से निकलकर जाली काम करने लगा। वह दूसरों की जाली हुण्डी लिखना और पैसा लेना। दूसरों की जमीन को किसी अन्य के नाम पर लिखवाना। नकली स्टाम्प पेपर बेचना, जाली दस्तावेज लिखवाना आदि काम करने लगा। एक दिन पुलिस को इस बात की खबर पड़ गई और उसने टीकमचन्द को गिरफ्तार कर लिया और उसे कानून के अनुसार सजा दी गई।

जैनदर्शन के अनुसार टीकमचन्द जाली दस्तावेज आदि काम के कारण कूटलेखक्रिया कर्म में प्रवृत्त था। इससे वह कूटलेखक्रिया नामक पाप का पात्र बना।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार टीकमचन्द जाली दस्तावेज तैयार करने से धारा 465 के अनुसार 2 साल के कारावास की सजा का पात्र है तथा जाली स्टाम्प पेपर बेचने पर धारा 257 के तहत 7 साल के कारावास की सजा का पात्र है।

न्यासापहार

पटना नगर के किशनगढ़ कॉलोनी में प्रियदर्शन सेठ रहता था। जो लालची और मक्कार था। उसका व्यापार दूसरों की सम्पत्ति का हरण करना था। वह किसी न किसी तरह दूसरे की सम्पत्ति को अपना बनाने की योजना बनाता रहता था। वह गरीबों, जरुरत मंदों के आभूषण, जमीन आदि गिरवी रखता था। उसी नगर के पास में पटोदी गाँव में वैशाली यादव नाम का किसान रहता था। जिसके इस वर्ष खेती में नुकसान हो गया था। जिस कारण वह पैसों के लिए मुहताज हो गया। उसने निर्णय लिया कि वह सेठ प्रियदर्शन के पास अपनी पत्नी के जेबर गिरवी रखकर कुछ पैसे उधार लेकर खेती होने पर चुका देगा। उसने अपनी पत्नि का गले का सोने का हार सेठ के पास गिरवी रखकर सेठ से 5000 रुपये उधार ले लिये। सेठ ने उस हार में चक्रवर्ती ब्याज चलाकर 6 माह में वह हार किसान से ले लिया और कह दिया हार पर कर्ज 40000 रुपये है। रुपये चुकाकर हार ले जाओ। किसान 5 हजार रुपये के 40 हजार रुपये कैसे चुकाता? आखिर

उसका वह हार डूब गया। वह किसान हतास होकर मेहनत से खेती करने लगा। परन्तु इस वर्ष भी उसे खेती में घाटा लगा और उसका मूलधन ही खेती में निकल पाया। उसी वर्ष उसकी राधिका नामक बेटी की शादी थी। उसके विवाह के लिए उसने पटना शहर के प्रत्येक सेठ से जमीन गिरवी रखकर उधार माँगा परन्तु कोई भी सेठ उसके गाँव की जमीन को गिरवी नहीं रखना चाहता। मरता क्या नहीं करता कहावत के अनुसार जानकर भी कि यह सेठ मेरी जमीन भी खा जाएगा। परन्तु पैसे की आवश्यकता थी। आखिरकार वह पुनः सेठ प्रिय सुदर्शन के पास पहुँचा। सेठ ने जितने पैसे उसे चाहिए थे, उससे कम पैसे उसे दिए और चक्रवर्ती ब्याज चलाकर उस अनपढ़ गरीब किसान की जमीन 2 साल में ही हड़प ली। जब वह वैशाली सेठ के पास पहुँचता है तो वह साफ मना कर देता है कि मेरे पास तुम्हारी कोई जमीन नहीं है। किसान हताश हो गाँव की चौपाल में बैठकर रो रहा था। तभी एक सज्जन पुरुष उससे पूछता है क्या हुआ? तब वह अपनी सारी कहानी बताता है। उस सज्जन पुरुष ने उसे पुलिस में रिपोर्ट लिखवाने को कहा। वैशाली ने उसकी बात मानकर पुलिस में रिपोर्ट लिखवाई। केस बहुत दिनों तक चलता रहा। कोर्ट ने साक्ष्य देखकर उस गरीब को इंसाफ दिया। सेठ को उसकी सारी सम्पत्ति वापस देनी पड़ी।

जैनदर्शन के अनुसार सेठ प्रियदर्शन ने न्यासापहार नामक पाप किया था। उसने झूठ बोलकर एवं अनावश्यक ब्याज चलाकर उसकी जमीन और धन हड़प लिया।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार सेठ प्रियदर्शन ने गरीब का शोषण किया है तथा अनावश्यक ब्याज लेकर जरुरत मंदों को लूटा है। इस कारण वह मनी लैंडिंग एक्ट के तहत सजा का पात्र है। उसने उसकी जमीन को हड़पा इससे वह धारा 210 के तहत 2 साल के कारावास की सजा का पात्र है। उसने किसान के साथ झूठ व फरेब किया है तथा उसकी सम्पत्ति को अपना बनाने का दावा किया। जिससे वह धारा 207 के तहत 2 साल के कारावास की सजा का पात्र है।

साकार मंत्र भेद

गंगानगर शहर के बसोदी गाँव में श्यामसिंह और मोहनसिंह दोनों भाई थे। अधिकांश गृहस्थी की बातों को एक-दूसरे से समझते थे। इन दोनों के घर के बीच में एक कपड़े के परदे का फासला था। इस कारण दोनों के घरों में हो रहे वार्तालाप भी दोनों परिवारों को अधिकतर मालूम रहते थे। कुछ दिनों के बाद गाँव में पंचायत समिति के चुनाव शुरू हो गये। कांग्रेस की ओर से श्यामसिंह तथा भाजपा की ओर से मोहनसिंह चुनाव लड़ने के लिए चुने गए। दोनों में आपसी भाईचारा शत्रुता में बदल गया। दोनों जनता के सामने एक-दूसरे को बदनाम करने लगे। श्यामसिंह ने मोहनसिंह के परिवार में लड़की के भाग जाने की बात, पत्नि की गुप्त बातें जनता के सामने कहने लगा। मोहनसिंह ने पुलिस में रिपोर्ट की तथा जाँच में श्यामसिंह दोषी पाया गया। चुनाव आयुक्त ने श्यामसिंह का निर्वाचन पत्र रद्द कर दिया। श्यामसिंह को जेल हुई।

जैनदर्शन के अनुसार किसी को कटुवचन यदि सत्य भी बोले जाए तो असत्य की कोटि में आते हैं और श्यामसिंह ने मोहनसिंह को अपमानित करने के उद्देश्य से उसकी गुप्त बातों को संकेत रूप से अथवा प्रत्यक्ष रूप से वचनों के द्वारा कहा। इस कारण श्यामसिंह पाप का भागीदार है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार किसी को अपमानित करने के उद्देश्य से उसकी गुप्त बातों को संकेत रूप से अथवा साक्षात् वचनों से प्रकट करता है तो धारा 500 के तहत 2 साल के कारावास की सजा मिलती है। जिसका श्यामसिंह पात्र था।

स्तेनप्रयोग

एक सज्जन परिवार में जिनेश और कमला नामक दम्पत्ति से

मोहित नाम का बालक उत्पन्न हुआ। वह स्वभाव से चंचल था। उसकी माता कमला ने उसे सद्संस्कारों से सज्जित करना प्रारम्भ कर दिया। वह प्रतिवर्ष की भाँति संस्कारों के साथ परिवर्धित होने लगा। उसके माता-पिता ने उसके अंदर संस्कारों की सभी बातें सिखाई थीं, परन्तु वह संस्कारों से सज्जित होने के बावजूद क्रोधी प्रकृति का एवं दूसरे की बातों में आने वाला व्यक्ति था। इस प्रकार जब वह बड़ा हुआ तो दुष्ट मित्रों की संगति ने उसके संस्कारों को गहरा आघात पहुँचाया। वह दुःसंगति में पड़कर माँस खाना, शराब पीना आदि सारे व्यसन चालू कर देता है। एक दिन मोहित के मित्र सोहन ने उसे चोरी में लाभ बताकर चोरी में मेहनत कम करनी पड़ती है तथा पैसा ज्यादा मिलता है आदि प्रलोभन देकर चोरी करने में लिप्त कर दिया। जिसकारण उसने छोटी-छोटी चोरियाँ करना प्रारम्भ कर दिया। इस कार्य में सोहन ने उसका पूरा साथ दिया। जिससे उसे प्रोत्साहन मिलता रहा और उसका दुःसाहस आसमान की ऊँचाईयों को छूने लगा। एक दिन सोहन ने मोहित को नगरपति सेठ के यहाँ चोरी करने की सलाह दी। परन्तु मोहित ने इस काम को करने से मना कर दिया तब सोहन ने उसे पूर्व में की गई चोरियाँ को पुलिस को बताने की धमकी देने का प्रयास करता रहा और वह उस प्रयास में सफल हो गया। रात के अंधेरे में मोहित अकेला नगरपति सेठ की हवेली में दीवाल में छेद करके घुस गया। उस समय सेठ का इकलौता बेटा जाग रहा था। अचानक उसने चोर को देखकर शोर मचाया। जिस कारण मोहित ने अपने बचाव के लिए उसके सिर पर पास पर पड़े हुए डण्डे का हल्का सा वार किया कि वह घायल होकर बेहोश हो जाए परन्तु सेठ का बेटा मर गया उसके प्राण पखेरु उड़ गये। बेटे की आवाज सुनकर घर के सारे लोग जाग गये और आवाज की ओर दौड़ते हुए पहुँचते हैं। तब देखते हैं कि सेठ का बेटा तो मर गया परन्तु मोहित चोर में परिवर्तन आ गया और सेठ के बेटे के समीप बैठकर वह रो रहा था। रोते हुए उसने मन में संकल्प किया कि वह आज के बाद चोरी नहीं करेगा और सेठ ने चोर

मोहित को पुलिस के आधीन कर दिया। जैसी करनी वैसी भरनी के सिद्धान्त के अनुसार अदालत ने मोहित को सजा सुना दी।

जैनदर्शन के अनुसार यदि इस कहानी में छुपे तथ्यों पर प्रकाश डाला जाए तो इसमें पाप क्या है? पापी क्या और उसने ऐसा क्यों किया? उसने स्वयं चोरी का अपराध किया इसलिए वह अपराधी है। उसने सेठ के बेटे को मारा इस कारण हत्या का दोषी है। उसने अपने बचाव के आशय से मारा था, इसलिए संकल्पी हिंसा का दोषी तो नहीं है। फिर भी वह गलत आशय से घर में घुसने पर अपने बचाव के लिए हिंसा की इसलिए वह दोष मुक्त भी नहीं कहा जा सकता है। उसके पश्चाताप करने पर उसने दोषों का प्रक्षालन भी किया। उसके मित्रों ने उसे गलत मार्ग पर लगाया। मिथ्योपदेश दिया तथा चोरी करने पर उसकी अनुमोदना की, चोरी के साधन उपलब्ध कराये। इस कारण अनुमोदना से चोरी पाप के भागीदार वे भी बने। तदनन्तर सोहन नामक मित्र ने अनुमोदना के साथ-साथ उसको दुष्प्रेरित भी किया तथा मना करने पर जबरदस्ती उससे वह काम कराया जिससे उसे कारित का पाप भी लगा।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार मोहित चोरी करने के कारण चोरी अपराध में धारा 379, 380, 381 के तहत उसे 7 साल कारावास की सजा दी जाती है तथा वह सेंध मारकर चोरी करने गया था इसके लिए धारा 446 में कहे गये रात्रि गृह भेदन की सजा धारा 448 के अनुसार एक वर्ष की सजा मिलती है तथा सहसा हत्या करने पर धारा 325, 324 के तहत 10 वर्ष की सजा मिलती है। फिर भी वह पश्चाताप करने पर दण्डाधिकारी उसकी सजा में कुछ राहत बरत सकता है। भारतीय दण्ड संहिता में अनुमोदना करने वाले को कोई दण्ड नहीं है। दूसरे पक्ष में सोहन दुष्प्रेरण करने वाला तथा चोरी के प्रयोग सिखाने वाला होने से धारा 414 के तहत 3 वर्ष के कारावास की सजा का पात्र है। जबरदस्ती मोहित से चोरी करवाने के लिए धमकाने से धारा 503 का दोषी है तथा धारा

506 के अनुसार दो साल के कारावास की सजा का पात्र है। चोरी का साधन उपलब्ध कराने पर धारा 414 के तहत 3 वर्ष के कारावास की सजा का पात्र है।

अङ्ग व्यापार

दिल्ली शहर में डॉक्टरों में प्रसिद्ध सुभाष नामक डॉक्टर रहता था। उसका दिन मरीजों की सेवा में ही बीतता था। उसके पास बहुत दूर-दूर के लोग इलाज कराने के लिए आते थे। एक दिन डॉक्टर सुभाष के अंदर लोभ जागृत हो जाता है। वह सोचने लगता है कि किस प्रकार पैसे कमाये जाएँ। उसने अंगों का व्यापार करना शुरु कर दिया। वह अपने पास आए लोगों के ऑपरेशन में कुछ अंग निकाल करके दूसरे खराब अंगों को लगा देता था तथा उन अच्छे अंगों को किसी पैसे वाले के शरीर में डाल कर अधिक पैसा कमाता था। इस प्रकार उसका व्यापार अधिक चलने लगा और उसने उस व्यापार में पैसा भी अधिक कमाया। जिन लोगों के अंगों का प्रत्यारोपण किया था। वह कुछ सालों के बाद मर गये। इस प्रकार डॉक्टर सुभाष के यहाँ पर मरीजों का आना कम होने लगा। जब मरीजों का आना कम हो गया तो उसने दूसरे तरीकों से धन कमाने की योजना बनाई।

1. उसने अपना एक अस्पताल खोला।
2. ब्लड डोनेशन वालों से 900 ग्राम में 1 लीटर के जगह 1000 ग्राम खून लेता था।
3. प्रत्येक मरीज के लिए एक्सरा कराना अनिवार्य कर दिया चाहे वह बीमार हो अथवा न हो।
4. व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् भी मरीज के परिजनों को जिन्दा बताकर उसका ऑपरेशन करना।

5. नकली दवाईयाँ लिखना और उनका कमीशन खाना।

6. अस्पताल में आने वाले मरीज को ग्लूकोज की बोतल चढ़ाना अनिवार्य कर दिया।

7. फेफड़ों का प्रत्यारोपण करना।

8. ज्यादा पैसे लेकर गर्भपात करना।

इन योजनाओं को उसने अपने जीवन में लागू किया और उसके साथ उसका एक कम्पाउन्डर था, जिसका नाम सेवाराम था। लालची कुत्ते को हड्डी मिल जाए तो क्या कहना उसी प्रकार इन दोनों को नाम के अनुरूप अस्पताल खोलने की अनुमति मिल गई और सुभाष ने अपने सेवाभावी पेशे को कुछ धन की लालच में बेच दिया।

एक दिन सुभाष का पत्नी के साथ मन मुटाव हो गया और वह क्रोध में आकर अपने गर्भ को उसके अस्पताल में किसी अन्य डाक्टर से गर्भपात करा लिया। जब सुभाष को इस बात का पता चला तो वह अपनी पत्नी के ऊपर बहुत गुस्सा हुआ और उससे मारपीट भी की परन्तु अब क्या होत है जब चिड़िया चुग गई खेत। कहावत की तरह उस सुभाष को भी दण्ड मिला। आखिर क्यों न मिलता उसने भी बहुत लोगों के घरों को संतान रहित किया। उसे भी संतान रहित जीवन व्यतीत करना पड़ा। सौभाग्य से उसकी पत्नी फिर गर्भ धारण करने के योग्य नहीं रही। संतान हीन सुभाष संतान प्राप्ति के प्रयासों में लग गया परन्तु कोई सफलता नहीं मिली।

एक दिन दत्तसिंह नामक मरीज ने उस अस्पताल के खिलाफ उसके अङ्गों की चोरी की रिपोर्ट लिखवाई। पुलिस ने उसकी रिपोर्ट के अनुरूप अस्पताल में छापा मारा। जिसमें अस्पताल के गैरकानूनी होने के तथा अङ्ग चोरी के सभी सबूत मिले। कानून ने अस्पताल में हो रहे गैरकानूनी कार्यों में जिम्मेदार सभी कर्मचारियों एवं डॉक्टरों को सजा दी।

जैनदर्शन के अनुसार अङ्गों का बिना अनुमति के प्रत्यारोपण करना चोरी कहलाती है तथा गर्भपात करना हिंसा के अंतर्गत आता है। सुभाष के द्वारा किए जाने वाले कार्य से कमाया गया पैसा अन्याय से कमाया हुआ धन है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार डॉ. सुभाष ने बिना अनुमति के लोगों के अंगों को चुराया इससे वह मेडिकल एक्ट के तहत सजा का पात्र है तथा उसने षड्यंत्र पूर्वक कार्य किया, जिससे वह धारा 120 (ख) के तहत अपराधी है तथा उसके इस कार्य से लोगों की जान चली गई, इससे वह धारा 302 के तहत मृत्यु दण्ड अथवा आजीवन कारावास का दोषी है तथा गर्भपात करने व अन्य डॉक्टरों से कराने के कारण धारा 312 के तहत 3 साल के कारावास की सजा का पात्र है तथा सुभाष की पत्नि ने गर्भपात कराया, जिससे वह धारा 312 के तहत 3 साल के कारावास की सजा का पात्र है। अस्पताल के अन्य कर्मचारी अपने करनी के अनुसार सजा के पात्र हैं। कम्पाउन्डर सेवाराम जो सुभाष के हर कार्य में सहयोगी था वह सुभाष के बराबर पाप का भागीदार है, इस कारण सुभाष को प्राप्त सजा सेवाराम को भी मिलेगी।

तदाहृतादान

कलकत्ता के निकट सुन्दरपुर नामक गाँव था। उस गाँव में सेठ परशुराम सपत्नि निवास करता था। वह अत्यन्त लालची प्रकृति का मनुष्य था। उसका एक सिद्धान्त था पैसा जहाँ से भी आए, जैसे भी आए आना चाहिए। वह सोने चाँदी की दुकान करता था। वह लोगों से सोने चाँदी के आभूषण भी खरीदता था। लोग जरुरत पड़ने पर उसे बेच भी जाते थे।

एक दिन दौलतगंज गाँव का चोर अपने गाँव से सोने के कुछ आभूषण चुराकर लाया और पकड़े जाने के डर से सुन्दरपुर के सेठ

परशुराम को कम दाम में बेच गया। सेठ समझ तो गया कि यह माल चोरी का हो सकता है। परन्तु उसे पैसे कमाने थे, इस कारण उसने वह माल खरीद लिया। इसी प्रकार वह चोर हमेशा चोरी करता और माल सेठ को बेच जाता। इससे चोर भी खुश और सेठजी भी खुश हो गये। एक दिन चोर चोरी करते हुए रंगे हाथों पकड़ा गया। उसने पुलिस की मार से सारी चोरियाँ स्वीकार कर लीं तथा चोरी का माल खरीदने में सेठ परशुराम मदद करता था। यह बात भी स्वीकार कर ली। इस प्रकार सेठ भी पकड़ा गया। उसे भी कानूनन सजा मिली।

जैनदर्शन के अनुसार चोरी का माल खरीदना तथा बेचना भी चोरी के अन्तर्गत आता है। इसे तदाहृतादान नामक अचौर्याणुव्रत का अतिचार मानकर छोड़ने का निर्देश दिया है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार चोरी करना तो पाप है ही परन्तु चोरी की वस्तु खरीदना एवं बेचना भी पाप है। सेठ परशुराम चोर से वस्तु खरीदता था, इस कारण वह धारा 411, 412, 413 के तहत 3 से 10 वर्ष के कारावास अथवा आजीवन कारावास की सजा का पात्र है।

विरुद्धराज्यतिक्रम

भीण्डर शहर में सेठ दौलतराम को पैसे कमाने का बहुत लालच था। वह एक ही दिन में करोड़पति बनने की ख्वाहिश रखता था। इस कारण वह न्याय-अन्याय सभी प्रकार से पैसा कमाता था। उसकी बीड़ी की दुकान थी। वह पूरे भीण्डर में मजदूरों से बीड़ी बनवाता था तथा बीड़ी में टेक्स चोरी कर पैसा कमाता। सरकारी अफसरों को पैसा देकर अपना गलत माल भी पास करवा लेता था। वह बीड़ी के पैकेटों में अफीम, चरस, गांजा, कोकीन आदि का माल भरकर भी बेचता था। जिससे उसे अत्यधिक लाभ होता था। यह काम उसका राजस्थान राज्य से संचालित होता तथा मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, दिल्ली, हरियाणा राज्यों में फैला हुआ था। एक दिन उसका माल ट्रक में भरकर

गुजरात जा रहा था। गुजरात चैकपोस्ट में चैकिंग के दौरान उसका गोरखधंधा पकड़ा गया। पुलिस ने पूछताछ के दौरान सारे राज्यों में उसका व्यापार सील कर दिया और उसको कानूनन सजा दी गई।

जैनदर्शन के अनुसार राज्य या सरकार के द्वारा प्रतिबंधित कार्य करने को विरुद्धराज्यातिक्रम नामक अपराध माना है। जिसे अचौर्याणुव्रत के अतिचारों में परिगणित किया है। दौलतराम ने राज्य में प्रतिबंधित नशीले पदार्थों को बीड़ी के व्यापार के माध्यम से शासन को धोखे में रखकर यह अपराध कारित किया। इस कारण वह विश्वातघात का भी दोषी है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार दौलतराम ने बीड़ी के व्यवसाय के माध्यम से चरस, गांजा आदि अवैध व्यवसाय को कारित करने पर वह नाकोटिक्स एक्ट के तहत सजा का पात्र है।

हीनाधिक मानोन्मान

भागलपुर नगर में नरेन्द्रसिंह नामक व्यापारी रहता था। जिसकी अनाज विक्रय की दुकान थी। उसके यहाँ पर सभी लोग अपना अनाज देते और लेते थे। उसने अपने नौकरों को समझा रखा था कि यदि वह यह कहे कि छोटी बहू बांट लेकर आना तो नौकर कम बजन के बांट लाये। तथा यह कहे कि बड़ी बहू बांट लाना तो नौकर अधिक बजन के बांट लाये। इसप्रकार जब कोई अनाज खरीदने आता तो कम वजन के बांट से तौलकर उसको देता, जिससे कुछ अनाज बच जाता था तथा जब कोई अनाज बेचने आता तो वह अधिक वजन वाले बांट से तौल कर देता जिससे वजन से अधिक अनाज कम पैसे में प्राप्त हो जाता था। सेठ के इस व्यवहार से सारे ग्राहक परेशान थे। आखिर किसी ग्राहक ने अपने घर से अनाज तौलकर सेठ के यहाँ बेचने लाया। सेठ की सारी हकीकत जानकर सेठ के खिलाफ रिपोर्ट करने चला गया। पुलिस ने सेठ की दुकान में छापा मारा जिसमें सेठ के पास दो प्रकार के बांट पाए गए। सेठ को गिरफ्तार कर लिया गया।

जैनदर्शन में सेठ के इस कर्म को हीनाधिक मानोन्मान नामक अचौर्यव्रत के अतिचार में गिनाया है। जिसमें नाप तौल की वस्तुओं में कम–बढ़ करना होता है। सेठ इस पाप का भागीदार है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार सेठ नरेन्द्रसिंह ने ग्राहकों के साथ नाप तौल संबंधी विश्वासघात किया, जिससे वह धारा 264, 265, 266, 267 के तहत एक वर्ष का कारावास अथवा जुर्माना अथवा दोनों की सजा का पात्र है।

प्रतिरूपक व्यवहार

गोंदिया शहर के अशोक विहार कॉलोनी में कालाबाजारी का काम जोर पकड़ रहा था। जिसमें राकेशकुमार नामक व्यापारी मसाला विक्रय एवं अनाज विक्रय का काम करता था। वह मसाला एवं अनाज पैकिंग करके बाजार में बेचता था। मसालों में हल्दी में पीला पाउडर, धनिया में घोड़े की लीद, मिर्च में ईट का बुरादा, चावल में सफेद कंकण, गेंहू में कम कीमत के गेंहू, वनस्पति घी में आलू, कालीमिर्च में पपीते के बीज आदि मिलावट करके बेचता था। लोग साफ तथा छना हुआ माल समझकर ले लेते। कुछ वर्षों तक उसका यह कारोबार बिना परेशानी के चलता रहा परन्तु जब उसके अनाज और मसाले खाकर लोग बीमार होने लगे तो जाँच में राकेशकुमार की दुकान का माल सामने आया। पुलिस तथा आबकारी विभाग ने छापा मारा और राकेशकुमार के यहाँ से 10 लाख रुपये की कीमत का माल राकेशकुमार के साथ गिरफ्तार किया। तथा राकेशकुमार को जुर्माने के साथ सजा हुई।

जैनदर्शन के अनुसार इस प्रकार का कार्य घृणित कार्य कहलाता है। जिसमें घटिया किस्म के माल को अच्छा माल बनाकर बेचा जाता है। इसमें लोगों को पैसों के साथ स्वास्थ्य में भी हानि होती है। राकेशकुमार ने इस प्रतिरूपक व्यवहार नाम अचौर्याणुव्रत का अतिचार पाप किया है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार राकेशकुमार इस प्रतिरूपक व्यवहार अपराध में उसने रोगों का संक्रमण फैलाया, इससे धारा 270 के तहत दो वर्ष का कारावास अथवा जुर्माना अथवा दोनों की सजा का पात्र है तथा राकेशकुमार यह जानते हुए कि यह पदार्थ अनुपयुक्त है फिर भी बेचता है तो वह धारा 272, 273 के तहत 6 माह के कारावास अथवा 1000 रुपये जुर्माना अथवा दोनों की सजा का पात्र है।

कुशील

मुंबई नगरी के सम्पत इंटरनेशनल कॉलेज में शैली नाम की सभ्य परिवार की लड़की बी.ए. की पढ़ाई कर रही थी। वह देखने में सुन्दर, बोलने में सभ्य भाषा का प्रयोग करने वाली थी। उसकी कक्षा में प्रकाश, मनोज, रोहन, आदित्य, नाम के चार होशियार पर बदमाश लड़के पढ़ते थे। वे चारों मन ही मन शैली से प्यार करते थे। परन्तु शैली इन चारों को पसंद नहीं करती थी। शैली की खूबसूरती पर सारा कॉलेज फिदा था।

एक दिन कॉलेज में प्रकाश, मनोज, रोहन, आदित्य ने शैली के साथ कामसेवन की योजना बनाई कि वे शैली को कॉलेज की ऊपरी मंजिल में किसी बहाने से बुलाकर उसके साथ यौनाचार करेंगे। इस प्रकार योजना बनाकर उन्होंने मोहित को कहा कि शैली से कहना कि इंग्लिश वाली सावित्री मेम ने ऊपर की मंजिल के क्लास रूम में बुलाया है। मोहित ने शैली से कह दिया। शैली भी सच मानकर क्लास रूम में पहुँच गई। शैली को आता हुआ देख चारों ने बेहोशी की दवा रूमाल में लगाकर शैली को बेहोश कर दिया और बेहोशी हालत में चारों ने एक-एक से शैली के साथ दुराचार किया और वहाँ से भाग गये। शैली को जब होश आया तो उसने चारों को दोषी मानकर पत्र लिखकर ऊपरी मंजिल से कूदकर आत्महत्या कर ली। शैली की आत्महत्या की खबर सुनकर पुलिस ने पत्र के आधार पर उन चारों को गिरफ्तार कर लिया।

जैनदर्शन के अनुसार शैली के साथ दुराचार करने पर वे कुशील

पाप के भागीदार हुए तथा उन्होंने पाप संकल्प पूर्वक किया है, इससे अधिक पाप के भागीदार हुए तथा जबसे वे कुशील पाप के प्रति सोचते रहे तब से वे कुशील पाप का आस्रव करते रहे। परन्तु उन्होंने शैली की हत्या नहीं की। उसे स्वयं सोचकर बिना हत्या किए उन चारों को सजा दिलानी चाहिए। इस कारण वे चारों प्रत्यक्ष रूप से हत्या के दोषी नहीं हैं।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार देखा जाए तो उन्होंने योजना बद्ध रूप से अपराध किया तथा उन्होंने अचेत अवस्था में कन्या के साथ दुष्कर्म किया, जिस कारण वह कन्या अपना बचाव भी नहीं कर पाई। इस कारण वे चारों धारा 375, 376 के तहत 10 वर्ष की सजा के दोषी हैं तथा उनका कृत्य उसके आत्महत्या में कारण बना, इस कारण अप्रत्यक्ष रूप से वे हत्या के दोषी भी हैं। इसमें धारा 302 के तहत वे चारों मृत्यु दण्ड अथवा आजीवन कारावास की सजा के पात्र हैं।

कुशील

किसी नगर के पास में एक तीर्थक्षेत्र था। वहाँ पर दूर दूर से लोगों का आना जाना लगा रहता था। लोग भगवान् के दर्शन करते, भक्ति करते तथा कुछ दिनों तक वहाँ रुकते भी थे। एक दिन बनारस के निवासी संतोष एवं उसकी कस्तूरबा नामक महिला मित्र उस तीर्थक्षेत्र में दर्शन के बहाने मौजमस्ती करने के लिए आये और पूरे दिन मात्र अपने कमरे में कामभोग में लगे रहते थे। आसपास के कमरे वाले उनके इस व्यवहार से खेदखिन्न होते थे। लोगों ने उनकी शिकायत कमेटी से की। कमेटी ने उनको बुलाकर पूछताछ की। तब सच्चाई सामने आई कि वे पति-पत्नि नहीं थे बल्कि दोनों दोस्त हैं, जो तीर्थयात्रा के बहाने कामभोग करने आए थे। कमेटी ने तीर्थक्षेत्र की बदनामी के डर से उन्हें पुलिस के हाथों नहीं दिया और क्षेत्र से निकाल दिया।

जैनदर्शन के अनुसार तीर्थक्षेत्र को अपवित्र करना, उसमें कामभोग आदि अन्य पाप क्रियाएँ करना निकृष्ट कार्य है। ऐसा कार्य करने से

निधत्ति और निकाचित कर्मों का बंध हो सकता है। जो अपने समय पर ही उदय में आते हैं। इन कार्यों से घोर पाप का बंध होता है।

भारतीय दण्ड संहिता में किसी के धर्म क्षेत्र को अपवित्र करने के उद्देश्य से यदि उसमें कामभोग आदि पाप क्रियाएँ करता है तो वह धारा 295 (क) के अनुसार 3 साल के कारावास की सजा का पात्र है। उसने अविवाहित स्त्री के साथ कामभोग किया जो उसकी पत्नि नहीं थी। इस कारण वह धारा 493 के तहत 10 वर्ष के कारावास का और जुर्माने का दोषी है तथा यदि वह पाप क्रियाओं का माहौल बनाता है। जिससे धार्मिक आस्था को ठेस पहुँचती है तो तथा अनैतिक देहव्यापार के तहत सजा का पात्र है।

परविवाह करण

एक शहर में दलपतराय नामक व्यापारी रहता था। समयानुसार वह कपड़े का व्यापार करता था, परन्तु पापकर्म के उदय से उसका वह व्यापार नहीं चला तथा उसने व्यापार करना छोड़ दिया। उसके मन में विचार आया कि वर्तमान समय में विवाह के लिए लड़कियों की कमी देखी जा रही है। ऐसा काम किया जाए कि जिसको विवाह के लिए लड़की चाहिए। ऐसे लड़के लड़कियों के विवाह कराकर उनसे अच्छा पैसा लिया जा सकता है। ऐसा विचारकर वह एक-दूसरे के लड़के लड़कियों का सम्बन्ध कराने लगा तथा लड़का लड़की की आयु अधिक होने पर या अच्छे परिवार में विवाह कराने के लिए अधिक पैसा लेता था। उसका यह व्यापार अधिक चलने लगा। कई बार तो उसने नाबालिक लड़के लड़कियों का विवाह भी कराया तथा उनसे भी अधिक पैसा लिया।

एक नगर में राजेश नामक 17 साल का लड़का था। वह अपने माता-पिता की इकलौती संतान था तथा उसके माता-पिता सदैव अस्वस्थ्य रहते थे। इसलिए उन्होंने अपने बेटे के नाबालिक होने पर भी विवाह

करने का निर्णय ले लिया तथा दलपतराय नामक दलाल से सम्पर्क किया। दलपतराय ने 15 साल की लताशा नामक लड़की से विवाह करा दिया तथा इसके बदले में दोनों पक्षों से 25-25 हजार रुपये ले लिए। विवाह के एक वर्ष बाद दोनों दम्पत्ति में विवाद हो गया, क्योंकि दोनों नासमझ थे, दोनों अपरिपक्व थे। दोनों के माता-पिता ने उनके तालाक के लिए कोर्ट में अर्जी लगा दी। अपील होने पर प्रथम दृष्ट्या दोनों के माता-पिता नाबालिक का विवाह कराने के दोषी निकले। दलपतराय दलाल तथा पंड़ितजी ये भी नाबालिक विवाह कराने के दोषी ठहरे। जिन्हें कोर्ट ने सजा सुनाई।

जैनदर्शन के अनुसार अपने पुत्र-पुत्री अथवा अपने आश्रित सगे सम्बन्धियों के विवाह कराने के लिए गृहस्थ को निर्देश दिया है। इसके अतिरिक्त अन्य का विवाह कराने से कराने वाला कुशील पाप का अंशतः भागीदार है। विवाहित जोड़ों के द्वारा जो कामभोग किया जाता है। जिसमें जीवों की हिंसा होती है। उसका 6 वाँ भाग पाप विवाह कराने वाले को होता है तथा विवाहित वर-वधु के जीवन में यदि कोई विवाद होता है। जिससे उनका जीवन समाप्त होता है या किसी की मृत्यु आदि होती है तो उसका भागीदार वह विवाह कराने वाला होता है। दलपतराय विवाह कराने के व्यापार से अधिक पाप का अर्जन करता है तथा नाबालिक का विवाह कराकर जघन्य पाप का उपार्जन भी करता है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार किसी का विवाह कराना अपराध की श्रेणी में नहीं आता परन्तु यदि कोई किसी का विवाह अयुक्त स्थिति में कराता है अर्थात् नाबालिक का विवाह कराने पर बाल विवाह अधिनियम के अनुसार सजा का पात्र है तथा किसी कन्या या लड़के का विवाह पागल से कराता है तो वह धारा 366 के तहत् 10 साल के कारावास का अधिकारी है तथा हिन्दू विवाह अधिनियम के तहत वह अयोग्य विवाह माना जाता है।

परिगृहीता इत्वरिकागमन, अपरिगृहीता इत्वरिकागमन, अनङ्गक्रीड़ा

नई दिल्ली के महरौली में राकेश नामक युवक रहता था। उसकी पत्नि का नाम शालनि था। वह सुंदर एवं धार्मिक थी। परन्तु राकेश धर्म में विश्वास नहीं करता था। वह विवाह के बाद भी दूसरी स्त्रियों को बुरी नजर से देखता एवं सम्बन्ध रखता था। वह नाबालिक लड़कियों को बहला फुसलाकर उनका देहशोषण करता था तथा उनको वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर करता था। वह अन्य विवाहित स्त्रियों को लुभाकर उनका मानभंग कर उन्हें धमकाकर पैसे लेता था। वह स्त्रियों की अनुपस्थिति में हस्तमैथुन एवं अपने दोस्तों के साथ सहयोनिज सम्बन्ध भी स्थापित करता था। इस प्रकार का एक कृत्य उसका और भी था। उसने अपने घर के पास सुभाष की पत्नि कविता से विवाह से पहले ही गलत सम्बन्ध बना रखे थे तथा विवाह के बाद भी वह कविता के घर उसके पति के अनुपस्थिति में जाता था। इस प्रकार वह अपनी पत्नि के साथ-साथ अन्य स्त्रियों से भी सहसम्बन्ध स्थापित करता था। एक दिन वह दिल्ली की किसी होटल में कविता के साथ दो दिन के लिए रुकने गया। एक दिन व्यतीत होने के बाद दूसरे दिन पुलिस ने उस होटल में छापा मार दिया। पुलिस के छापा मारने पर 50 जोड़े पकड़े गए। जिनमें से राकेश और कविता भी थे। पुलिस को अपने पति-पत्नि का रिश्ता लाख बताने के बावजूद भी पुलिस ने नहीं माना तथा उनकी पूछताछ प्रारंभ कर दी। पूछताछ में उसकी असली पहचान सामने आई वह पकड़ा गया। उसने अपनी पत्नि को छोड़कर अन्य स्त्री से अवैध सम्बन्ध स्थापित किए। उसे कानून ने सजा सुनाई।

जैनदर्शन के अनुसार राकेश परिगृहीता इत्वरिकागमन का दोषी है क्योंकि वह विवाहिता स्त्रियों से सम्बन्ध रखता था तथा वह नाबालिक और कुमारी कन्याओं के साथ भी दुष्कर्म करता था। इस कारण वह

अपरिगृहीता इत्वरिकागमन का भी दोषी है। वह उनको धमकी देता है तथा उनसे वेश्यावृत्ति कराने का दोषी भी है। वह हस्तमैथुन तथा सहयोनिज सम्बन्ध के कारण से अनङ्गक्रीड़ा का दोषी भी है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार वह एक पत्नि के होने के बाद भी अन्य स्त्रियों से सम्बन्ध रखता था, जिससे जारकर्म का अपराधी है। इसके लिए वह धारा 497 के तहत 5 साल के कारावास का अधिकारी है। तथा वह नाबालिक लड़कियों का व्यापार करता था। जिसके लिए वह धारा 366 (क), 372 के तहत 10 साल की सजा का पात्र है तथा धारा 498 के अनुसार विवाहिता स्त्री कविता को अपने साथ ले गया, इस आशय से वह बहला फुसला कर ले जाने से दो वर्ष के कारावास का पात्र है। राकेश अन्य कन्याओं के साथ उनकी सहमति के बिना मैथुन सेवन करता था, इसकारण वह धारा 493 के तहत दस वर्ष के कारावास का और जुर्माने का पात्र है। अनङ्गक्रीड़ा को भारतीय दण्ड संहिता में प्रकृति विरुद्ध मैथुन सेवन करना कहा है, जिसके लिए धारा 377 के तहत आजीवन कारावास की सजा निर्धारित है, जिसकी अवधि दस वर्ष तक हो सकती है।

कामतीव्राभिनिवेश

किसी नगर में सुरेश नामक व्यापारी रहता था। उसकी पत्नि का नाम यशोधरा था। वे दोनों आलसी और कामचोर थे। उनसे कोई भी कार्य समय पर नहीं होता था। उनके हड़पाल नामक एक पुत्र था। जो अपने माता-पिता के स्वभाव से भी बढ़कर था। वह युवावस्था में भी कोई काम नहीं करता था और जिसके पास कोई काम नहीं होता उसका दिमाग शैतान की तरह चलता है तथा उसके दोस्त भी शैतान होते हैं। मोहल्ले के सारे युवाओं के विवाह के लिए कन्याओं के रिश्ते आ रहे थे और बहुत से युवाओं का विवाह भी सम्पन्न हो रहा था। यह देखकर हड़पाल के मन में बेचैनी हो रही थी कि मेरा विवाह कब होगा। कोई मुझे भी देखने आए

तो मेरा भी विवाह हो जाएगा। इस प्रकार मन में उथलपुथल चल रही थी। वह नगर में जिस सुन्दर कन्या को, सुन्दर स्त्री को देखता उसके मन में विचार उत्पन्न होने लगते कि इस कन्या से मेरा विवाह हो जाए, यह स्त्री मेरी पत्नी बन जाए इत्यादि कामसेवन की उसके मन में तीव्र उत्कण्ठा उत्पन्न होने लगी। परिणाम स्वरूप वह वेश्यावृत्ति करना प्रारंभ कर देता है।

एक दिन उसके घर में किसी दूसरे नगर के कन्या पक्ष के हड़पाल को देखने वाले आ गये। हड़पाल के मन में बहुत खुशी हुई कि यह मेरी पत्नी बन जाएगी। परन्तु जब हड़पाल के कामकाज, व्यापार के विषय में पूछा तो उसके बेरोजगार होने की बात सामने आ जाती है। और उसका रिश्ता उस कन्या से नहीं हो पाता। वह बहुत उदास हो गया। उसी समय वह घर से बाहर वेश्यावृत्ति करने के लिए चला गया। वह वहाँ शराब पीता है। वहाँ वेश्या के द्वारा उसका वैसा छीनकर उसे वहाँ से निकाल दिया गया। आखिर वह गली-गली शराब के नशे में भटकता हुआ सूनसान स्थान पर पहुँच जाता है तथा वहाँ से आने-जाने वाले लोगों पर नजर रखता है। अचानक वहाँ से एक 15 साल की सुन्दर कन्या निकलती है। वह उसका अपहरण कर लेता है। तथा एकान्त स्थान में जाकर उसका शीलभंग कर देता है। इस प्रकार काम की तीव्रता के कारण अपने से कम आयु की कन्या के साथ भी यौनाचार करता है। उसकी यह प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। आखिर वह सूनसान रास्ता भयंकर हो गया। और वहाँ से सभी ने अकेले निकलना बंद कर दिया। एक दिन दोपहर में मुख में कपड़ा बांधे हुए यौवनावस्था की कन्या वहाँ से निकलती है। हड़पाल को उसके ऊपर यौनाचार करने का मन हो गया। और उसे बेहोश कर उसने उसके साथ जबरदस्ती यौनाचार किया। यौनाचार की अधिकता के कारण से उस कन्या की मृत्यु हो गई। मृत्यु होते ही वह घबड़ा गया। और उसने उस लड़की का मुख देखने के लिए उसके मुख से कपड़ा अलग किया तो वह आचम्भित रह गया। उसके आँखों से आँसू आ गये, हाथ पैर काँपने लगे, उसके शरीर से पसीना निकलने लगा आखिर वह उसके

बड़े पिताजी रामावतार की इकलौटी बेटी संजना थी। जो उसे प्रतिवर्ष राखी बांधती थी और अपनी रक्षा के लिए भाई से आशा करती थी। उसी भाई ने अपनी बहिन का शीलभंग किया तथा उसकी हत्या कर दी। इतना विचार करने के बाद वह अपनी जान बचाने के लिए तथा पुलिस से बचने के लिए वहाँ से भाग गया। जब संजना के घर वालों को पता चला कि उनकी बेटी अभी तक घर नहीं पहुँची तो उन्होंने पुलिस में रिपोर्ट की तथा स्वयं भी छानबीन में जुट गये। कुछ दिनों बाद लोगों ने पुलिस को खबर दी कि इस सूनसान जगह से किसी शरीर के सड़ने की बदबू आ रही है। तब पुलिस वहाँ पहुँची तो पता चला वह रामावतार की बेटी संजना है। यह पता चलने पर पुलिस ने खोजी कुत्ता उस जगह से कातिल के पीछे दौड़ाया परन्तु खबर नहीं मिली। संजना की लाश का पोस्टमार्टम कराया गया। तब तथ्य उजागर हुआ कि इसकी मृत्यु बलात्कार करने की अधिकता के कारण हुई है। डॉक्टरों ने डी.एन.ए टेस्ट कराया। उससे यह तथ्य भी उजागर हुआ कि बलात्कार करने वाले की और संजना की डी. एन. ए रिपोर्ट एक सी है। अर्थात् संजना का बलात्कार करने वाला कोई उसका अपना रिश्तेदार है। पुलिस ने सभी रिश्तेदारों का डी.एन.ए टेस्ट कराया तथा डी.एन.ए की रिपोर्ट, हत्या के स्थल के साक्ष्य एवं खोजी कुत्ते के पहुँचने के स्थान से हड़पाल को दोषी ठहराया गया। आखिर पापी कितना भी बचे कभी न कभी पकड़ में आ ही जाता है। पुलिस ने उसके खिलाफ केस दर्ज किया तथा कानून के अनुसार उसे सजा दिलवाई।

जैनदर्शन के अनुसार हड़पाल कामतीव्राभिनिवेश के कारण कुशील पाप का दोषी है तथा उसने संजना की हत्या की, इस कारण हिंसा पाप का दोषी है। परन्तु उसने हत्या करने का संकल्प नहीं किया, इस कारण संकल्पी हिंसा का दोषी नहीं है परन्तु उसके इस कृत्य से हिंसा अवश्य हुई है इसलिए हिंसा का दोषी तो है। साथ ही हड़पाल वेश्यासेवन पाप का दोषी है, शराब पीने से मद्यपान के पाप का दोषी है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार हड़पाल कामतीव्राभिनिवेश के कारण उसने 15 वर्ष की कन्या के साथ बलात्कार किया, इस कारण वह धारा 366 के तहत 10 वर्ष की सजा एवं संजना के साथ बलात्कार किया इस कारण वह धारा 375 के तहत बलात्कार का दोषी है। जिसके लिए धारा 376 के तहत 2 वर्ष से 10 वर्ष तक की सजा दी जाती है तथा बलात्कार के दौरान उससे संजना की हत्या भी हो गई। इस कारण हत्या पाप का दोषी है। जिसमें धारा 302 अथवा 304 के अनुसार मृत्यु दण्ड तथा आजीवन कारावास की सजा प्राप्त होती है। भारतीय दण्ड संहिता में अप्राप्यवय लड़की के साथ वेश्यावृत्ति करने पर धारा 366 के तहत 10 वर्ष के कारावास की सजा है। भारतीय दण्ड संहिता में शराब पीने को तथा कामतीव्राभिनिवेश को दण्ड की कोटि में नहीं लिया है परन्तु इनके कार्य से जो पाप होता है उसे दण्ड की कोटि में परिगणित किया है।

वेश्यावृत्ति

पंजाब के चण्डीगढ़ शहर में परबिन्दर सिंह नामक युवक रहता था। जिसका काजू का व्यवसाय था परन्तु वह व्यवसाय इतना अधिक सफल नहीं हो सका। इसकारण वह व्यवसाय के लिए दिल्ली आ गया। और वहाँ उसने ऑटोपार्टस का व्यवसाय किया। ऑटोपार्टस का व्यवसाय बहुत तरक्की पर था। उसके पास पैसा बहुत अधिक हो गया। उसने पैसे का सदुपयोग करने के लिए एक कन्या अनाथाश्रम खोला। जिसमें वह बेबस और बेसहारा लड़कियों को भर्ती करता और उनकी परवरिश करता तथा अनाथाश्रम के लिए लोग भी खूब दान देते थे परन्तु उसके मन में पाप तो पहले से भरा था। मात्र भलाई का दिखावा करता था। जब लड़कियाँ बड़ी होने लगी तो वह उन्हें नौकरी के लिए बाहर अन्य शहर भी भेजता था। नौकरी के लिए वह लड़कियों को अपने ऑफिस या फार्महाऊस में समान सहित बुलाता तथा उनका देहशोषण करके उन्हें वेश्यावृत्ति के लिए बेच देता था। इस प्रकार उन लड़कियों की परवरिश तो समाज के पैसे से हो रही थी और उन लड़कियों को वेश्यावृत्ति के लिए बेचकर वह अपनी तिजोड़ी भरता था।

कन्या अनाथाश्रम में सभी लड़कियाँ उसे भगवान् की तरह मानती थी, क्योंकि जिनके ऊपर से माता-पिता का साया उठ गया हो उनके लिए माता-पिता की तरह परवरिश करना फरिश्ते से कम नहीं था। परन्तु वह फरिश्ते के वेश में शैतान था। वह लड़कियों की परवरिश माता-पिता की तरह करता तो था परन्तु बड़े में वेश्यावृत्ति कराना उसका उद्देश्य था। उसी अनाथाश्रम में मोहनी नाम की अनाथ लड़की थी। जिसने बचपन में अपने माता-पिता, बड़े भाई और छोटी बहिन को कार बम विस्फोट में खो दिया और अनाथ हो गई। वह भी परमिन्दर सिंह को फरिश्ता मानती थी। मोहनी आखिर ऊँचे घराने की थी तथा सुन्दर भी थी। इसकारण उस 21 वर्षीय मोहनी पर परमिन्दर का दिल आ गया। उसने मोहनी को नौकरी करने का प्रस्ताव दिया। मोहनी को पैसे की जरूरत थी। इस कारण वह नौकरी का प्रस्ताव सुनकर खुश हो गई। परमिन्दर सिंह ने उसे सोमवार को फार्महाऊस में पूरा सामान लेकर बुलाया। मोहनी परमिन्दर सिंह को अपने पिता के समान मानती थी। इस कारण विश्वास करके उसके पास पहुँच गई। सेठ ने मोहनी को नींद की गोली पानी में घोलकर पिला दी। जिससे वह सो गई और परमिन्दरसिंह ने उसका देहशोषण करके उसे वेश्यावृत्ति के लिए दुबई के व्यापारी को बेच दिया। मोहनी को जब होश आया तो इस बात का एहसास हुआ कि यह मुझे वेश्यावृत्ति के लिए ले जा रहे हैं तो वह मौका देखकर भाग गई। उसने दिल्ली के मुख्य पुलिस थाने में रिपोर्ट लिखवाई। पुलिस ने परमिन्दर को गिरफ्तार किया और अनाथाश्रम को सरकाराधीन कर दिया।

जैनदर्शन के अनुसार परमिन्दर देहशोषण करने के कारण बलात्कारी था तथा उसने लड़कियों एवं समाज का विश्वास तोड़ा है इसलिए विश्वास घाती है। वह वेश्यावृत्ति करवाने वाला पापी भी है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार परमिन्दरसिंह ने कुमारी कन्याओं का उनकी अनुमति के बिना देहशोषण किया। इस कारण वह

धारा 375 के अनुसार बलात्कार का दोषी है तथा उसे धारा 376 के तहत 2 वर्ष से 10 वर्ष तक के कारावास की सजा हो सकती है तथा उसने अपने अभिरक्षा में की गई कन्या के साथ बलात् सहवास किया। इससे धारा 376 (ख) के तहत पाँच वर्ष के कारावास का भागी होगा। वह अप्राप्यवय लड़कियों को वेश्यावृत्ति के लिए पालता था तथा बेचता था, जिससे वह धारा 372, 373 के तहत दस वर्ष के कारावास का पात्र है। भारतीय दण्ड संहिता में समाज के शान्त माहौल को खराब किए बिना स्वेच्छा से वेश्यावृत्ति करना अपराध नहीं है परन्तु वेश्यावृत्ति के लिए विवश करना या बलपूर्वक वेश्यावृत्ति कराना अपराध है।

❑❑❑

संदर्भ सूची

1. आदिनाथ पुराण, भाग-1, श्लोक-250, पृष्ठ-369
2. सर्वार्थसिद्धि, अध्याय-7, सूत्र-1, टीका-664,
3 तत्त्वार्थ सूत्र, अध्याय-7, सूत्र-2
4. राजवार्तिक , अध्याय-6, सूत्र-8
5. राजवार्तिक अध्याय-6, सूत्र-6
6. राजवार्तिक, अध्याय-6, सूत्र-6
7. प्रवचनसार, अधिकार-3, गाथा-18,19
8. प्रवचनसार, अधिकार-3, गाथा-17
9. सर्वार्थसिद्धि, पृष्ठ-272
10. यशस्तिलक चम्पू, पृष्ठ-96
11. जैनेन्द्रसिद्धान्त कोश, भाग-4, पृष्ठ-532
12. तत्त्वार्थसूत्र,अध्याय-7, सूत्र-4
13. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-25
14. राजवार्तिक, अध्याय-7, सूत्र-25 वार्तिक-1-5, पृष्ठ-738

15. राजवार्तिक, अध्याय-7, सूत्र-14
16. राजवार्तिक, अध्याय-7, सूत्र-5
17. राजवार्तिक, अध्याय-7, सूत्र-26
18. मनुस्मृति, अध्याय-8, श्लोक-191, पृष्ठ-405
19. राजवार्तिक, अध्याय-7, सूत्र-15
20. तत्त्वार्थ सूत्र, अध्याय-7, सूत्र-6
21. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-27
22. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-27
23. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-27
24. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-28, पृष्ठ-555
25. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-16, वार्तिक- 5, 6 पृष्ठ- 543
26. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-28, वार्तिक-4, 5 पृष्ठ-555
27. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-28, वार्तिक-4, 5 पृष्ठ-555
28. तत्त्वार्थ सूत्र, अध्याय-7, सूत्र-8
29. राजवार्तिक,अध्याय-7, सूत्र-28, वार्तिक-4, 5 पृष्ठ-555

उपसंहार

जैनाचार में अहिंसा के अनुपालनार्थ सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह व्रत रूप पंचसूत्रीय आचार की प्ररूपणा की गई है। उक्त पाँचों व्रतों का मुख्य उद्देश्य अहिंसा का अनुपालन ही है। जैसे खेत की फसल की सुरक्षा के लिए उसके चारों ओर बाड़ लगाई जाती है, वैसे ही सत्य आदि अहिंसा की रक्षा के लिए लगायी जाने वाली बाड़ की तरह है। आत्मविश्वास में बाधक कर्मों को रोकने तथा उन्हें नष्ट करने के लिए अहिंसा एवं तदाधारित सत्य आदि व्रतों का परिपालन अनिवार्य है। इसमें व्यक्ति एवं समाज दोनों का हित निहित है। वैयक्तिक उत्थान एवं सामाजिक उत्कर्ष के लिए असत्य का त्याग, अनधिकृत वस्तु के ग्रहण से परहेज तथा संयम का परिपालन अनिवार्य है। इनके अभाव में अहिंसा का विकास नहीं हो सकता। परिणामतः आत्मविकास में बहुत बड़ी बाधा उपस्थित हो जाती है। इन सबके साथ अपरिग्रह व्रत भी आवश्यक है। परिग्रह आत्मविकास का प्रबल शत्रु है। जहाँ परिग्रह होता है,वहाँ आत्मविकास के सारे मार्ग अवरुद्ध हो जाते हैं। इतना ही नहीं परिग्रह आत्मा के अधःपतन का बहुत बड़ा कारण बनता है। परिग्रह का अर्थ ही है पाप का संग्रह। जितनी अधिक आसक्ति बढ़ती है, उतनी ही अधिक हिंसा बढ़ती है। यही हिंसा मानव समाज में वैषम्य उत्पन्न करती है। इसी से मनुष्य का आत्मपतन भी होता है। अपरिग्रह वृत्ति अहिंसामूलक सम्यक् आचार के परिपालन के लिए अनिवार्य है। हिंसा मत करो, झूठ मत बोलो, चोरी मत करो, कुशील मत करो तथा परिग्रह का संचय मत करो। इन निषेधात्मक नियमों से ही मनुष्य के आचरण का परिष्कार सरलतम रीति से किया जा सकता है। हिंसादिक पाँच पाप सामाजिक पाप हैं। मनुष्य की इन्हीं प्रवृत्तियों से आज मानव समाज प्रदूषित हो रहा

है। जो व्यक्ति जितने अंशों में इनका परित्याग करता है, वह उतना ही सभ्य और समाज हितैषी माना जाता है। जितने अधिक व्यक्ति इसका पालन करेंगे, समाज उतना ही अधिक समृद्ध, सुखी और प्रगतिशील बनेगा।

भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही धर्म का जोर रहा है। परन्तु वर्तमान समय में लोगों के विचारों में परिवर्तन आया और धर्म का स्थान परिवर्तन होकर कर्म ने ले लिया। कर्म के वशीभूत होकर व्यक्ति न्याय अन्याय का ध्यान न रख आजीविका का उपार्जन करने लगा। भारतीय समाज में अन्याय तथा पाप कर्म में रोक लगाने के लिए प्राचीन काल से ही कानून व्यवस्था प्रारम्भ हुई। धर्म और कानून का उद्देश्य पाप प्रवृत्ति को समाप्त करना तथा पुण्य प्रवृत्ति को बढ़ावा देना है। इसी कारण यदि व्यक्ति धर्म का पालन सम्यक् प्रकार से करता है तो उसे कानून की आवश्यकता नहीं होती तथा कानून का पालन भी बिना प्रयास के हो जाता है। इसी कड़ी में जैनदर्शन के सिद्धान्तों का प्रयोग कानून व्यवस्था में सर्वाधिक हुआ है, अतः जैन दर्शन के सिद्धान्तों का पालन स्वतः पाप से निवृत्ति का मार्ग है।

❑❑❑

संदर्भ ग्रंथ

1. आदिनाथ पुराण, आचार्य जिनसेन, सम्पादक - डॉ. पन्नालाल साहित्याचार्य, प्रकाशक- भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 2004

2. सर्वार्थसिद्धि, आचार्य पूज्यपाद स्वामी, सम्पादक - पं. फूलचन्द शास्त्री, प्रकाशक-भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, संस्करण - चतुर्थ।

3 राजवार्तिक, आचार्य अकलंक देव, संपादक - प्रो. महेन्द्रकुमार जैन, न्यायाचार्य, भारतीय ज्ञान पीठ दिल्ली, 2001

4. प्रवचनसार,आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 1999

5. यशस्तिलक चम्पू, आचार्य सोमदेव सूरि, निर्णयसागर प्रेस, मुम्बई, 1968

6. जैनेन्द्र सिद्धान्त कोश, जिनेन्द्र वर्णी, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, 2003

7. मनुस्मृति, हिन्दी टीकाकार - पं0 हरगोविन्द शास्त्री सं0- गोपाल शास्त्री, प्रकाशन- चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी, 2006

8. बृहद् अपराध विधियाँ, (दण्ड प्रक्रिया संहिता,1973, भारतीय दण्ड संहिता,1860, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872), पी. के. मुखर्जी, प्रकाशक- मॉडर्न लॉ हाऊस, दिल्ली, 2006